माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला : ग्रन्थांक ५२

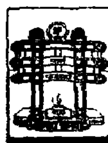
जैन-शिलालेख-संग्रह

[भाग ५]

सम्पादक

डॉ० विद्याधर जोहरापुरकर

हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म० प्र०)



प्रकाशक

भारतीय ज्ञानपीठ

माणिकचन्द्र दि० जैन ग्रन्थमाला

ग्रन्थमाला सम्पादक
डॉ० हीरालाल जैन, डॉ० आ० ने० उपाध्ये

प्रकाशक
भारतीय ज्ञानपीठ
३६२०।२१ नेताजी सुभाष मार्ग, दिल्ली–६

प्रथम संस्करण
वीर निर्वाण संवत् २४९७
विक्रम सवत् २०२८
सन् १९७१

मूल्य तीन रुपये

मुद्रक
सन्मति मुद्रणालय,
दुर्गाकुण्ड मार्ग, वाराणसी–५

Māṇikachandra D. Jaina Granthamālā · No. 52

JAINA-ŚILĀLEKHA-SAṂGRAHA

Edited by

Dr Vidyadhar Joharapurkar
Hamidia College, Bhopal (M P)

Published by

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪṬHA

Māṇikachandra D. Jaina Granthamālā

General Editors :
Dr. H. L. Jain, Dr. A N Upadhye

Published by
Bhāratīya Jñānapīṭha
3620/21 Netaji Subhas Marg, Delhi-6

First Edition
V N S. 2497
V. S. 2028
A D 1971

Price Rs. 3/-

अनुक्रम



संकेतसूची

रि० इ० ए०	एन्युअल रिपोर्ट ऑफ इण्डियन एपिग्राफी
ए० इ०	एपिग्राफिया इंडिका
क० रि० इ०	कन्नड रिसर्च इन्स्टीट्यूट, धारवाड द्वारा प्रकाशित शिलालेख सूची
सा० इ० इ०	साउथ इंडियन इन्स्क्रिप्शन्स



प्रधान सम्पादकीय

इतिहास, राष्ट्र और समाज के ज्ञान-भण्डार का एक बहुत महत्त्वपूर्ण अग है। इतिहास से ही जाना जाता है कि उस के भूतकाल मे कौन-सी घटानाएँ हुई और वर्तमान जीवन का कैसे क्रम-विकास हुआ। इतिहास की ही जानकारी से लोगो को अपना भविष्य उज्ज्वल बनाने की स्फूर्ति प्राप्त है। भारतीय साहित्य के विषय में विद्वानों का यह मत है कि यद्यपि उस में दर्शन, कला व विज्ञान आदि के विकास की प्रचुर सामग्री प्राप्त होती है, किन्तु उस से प्राप्त होने वाली ऐतिहासिक सामग्री बहुत अल्प, खण्डित और दोषपूर्ण है। इस कारण जब तक भारतीय इतिहास के निर्माण के लिए इतिहासकारो को केवल साहित्य पर अवलम्बित रहना पडा, तब-तक भारतीय इतिहास ऐसी प्रतिष्ठा प्राप्त नही कर सका जिस से वह विदेशी विद्वानों का सम्मान प्राप्त कर सके। किन्तु इस क्षेत्र में एक बड़ी उत्क्रान्ति उस समय से हुई जब देश के विभिन्न भागो में बिखरे हुए शिलालेखो, ताम्रपत्रो और मुद्राओ आदि के रूप मे पुरातत्त्व विषयक सामग्री उपलब्ध हुई। इन प्राचीन लेखो के पढे जाने की एक रोमाचकारी कहानी है। उस के प्रभाव से भारतीय इतिहास के क्षेत्र में एक व्यवस्था आ गयी। अनेक त्रुटित कड़ियाँ जुड़ गयो। नये-नये राजाओं और राजवंशो का पता चला। और इन सब से भी बडी उपलब्धि यह हुई कि इतिहास के प्राणभूत कालक्रम का सुदृढ आधार प्राप्त हो गया। कौन जानता था मौर्य सम्राट् अशोक के सच्चे स्वरूप को? पालि ग्रन्थो के आधार से वह एक अत्यन्त क्रूर पुरुष था जिस ने अपने ९९ भ्राताओं को मौत के घाट उतार कर मगध का राज्य प्राप्त किया था। परन्तु जब स्वयं इस सम्राट् के द्वारा

लिखाये गये और पाषाण स्तम्भो तथा शिलाओ पर अंकित कराये गये वे पच्चीस-तीस लेख पढे गये जिन मे उस के मानवीय गुणो, जीवन के उच्च आदर्शों तथा शासन के अनुपम सिद्धान्तो का प्रतिबिम्बन हुआ है, तब संसार की आँखे खुली और उस ने एकमत से स्वीकार किया कि अशोक एक महान् सम्राट् था जिस ने न केवल समस्त भारतवर्ष को एक राष्ट्रीय इकाई बना डाला था, अपितु उस ने मिश्र आदि दूर-दूर के देशो तक अपने प्रतिनिधि भेजकर अपनी धर्म-नीतियो का प्रचार किया था। उस ने युद्ध-विजय को त्यागकर धर्म-विजय की नीति अपनायी थी। उसी प्रकार कौन जान सकता था गुप्तवंशीय सम्राट् समुद्रगुप्त के गुणों को और प्रताप को, यदि उन की इलाहाबाद के शिलास्तम्भ पर उत्कीर्ण प्रशस्ति प्राप्त न होती ? इत्यादि।

जैन साहित्य मे उस के पुराणो और काव्यो मे युग-युगान्तरो का लेखा-जोखा प्राप्त होता है। उन मे ग्रथित तथा स्वतन्त्ररूप से भी उपलब्ध पट्टावलियो मे दीर्घकालीन मुनि-परम्परा की लम्बी सूचियाँ भी पायी जाती हैं। किन्तु उन मे तथ्यों और कल्पनाओ, वास्तविकताओ और अतिशयोक्तियो एव लौकिक व अलौकिक बातो का इतना अधिक सम्मिश्रण पाया जाता है कि आधुनिक विद्वानो को उन पर विश्वास करना संभव नही होता। काल-निर्णय की कठिनाई भी इतनी बड़ी है कि ऐतिहासिक घटनाओ को भी किसी कालानुक्रम में बाँधना सभव नही हो पाता। इतिहास के इस साधन को जब से शिलालेखो का बल मिला, तब से जैनधर्म के इतिहास मे भी एक बडी उत्क्रान्ति आ गयी है। हमारे साहित्य मे कलिंग नरेश महा-मेघवाहन महाराज खारवेल का कही नाम-निशान भी नही पाया जाता था। किन्तु उन का जो जीवन-चरित्र ओडिसा में उदयगिरि की हाथी-गुम्फा नामक गुफा मे उत्कीर्ण पाया गया है उस ने जैनधर्म के प्राचीन इतिहास को एक सुदृढ आधार प्रदान किया है। अशोक के एक शिलालेख से ज्ञात होता है कि उन्होने ईसवी पूर्व तीसरी शती मे व अपने राज्य के

९ वें वर्ष में कलिंग देश पर आक्रमण किया था और उस महासंग्राम में लाखों योद्धाओं की मृत्यु हुई थी, लाखों बन्दी बनाये गये थे और लाखो लोग बेघरबार हो गये थे। इसी घटना ने अशोक के जीवन को हिंसा के मार्ग से अहिंसा की ओर लौटा दिया था। ईसवी पूर्व दूसरी शती में हुए सम्राट् खारवेल के लेख से विदित होता है कि वे आदि से ही, सम्भवतः अपने वंशानुक्रम से ही, जैनधर्मावलम्बी थे। उन का शिलालेख ही 'णमो अरहंताण' के महामन्त्र से प्रारम्भ होता है। लेख में यह भी अंकित पाया जाता है कि जिस जैन प्रतिमा को नन्दवंशी राजा कलिंग से मगध ले गये थे उसे खारवेल सम्राट् ने वहाँ से पुन लाकर अपनी राजधानी में प्रतिष्ठित किया। उन के जीवन में धार्मिक, नैतिक तथा लौकिक भावनाओ और घटनाओं का अद्भुत समन्वय पाया जाता है। कुमारकाल में राजोचित समस्त विद्याओ और कलाओं को सीखकर उन्होंने २४ वर्ष की आयु में राज्याभिषेक पाया, और फिर अगले १३ वर्षों में देश-विजय एव जन-कल्याणकारी कार्यों का ऐसा अनुक्रम स्थापित किया जो अपने आप में एक आदर्श है। उन के समय में जिन गुफा मन्दिरो का निर्माण किया गया (शि० ले० सं० २, २), उन की सुरक्षा और जीर्णोद्धार आदि की व्यवस्था करना उन के उत्तराधिकारी राजाओं ने भी अपना धर्म समझा, और यह क्रम १० वीं शताब्दी तक अखण्ड रूप से चलता पाया जाता है, जब कि वहाँ के राजा उद्योतकेसरीदेव द्वारा किये गये जीर्णोद्धारादि का उल्लेख वहाँ के शिलालेखो में मिलता है (शि० ले० सं० ४,९३-९५)

यो तो अन्य भारतीय शिलालेखो के साथ-साथ जैन शिलालेखो का वाचन, सम्पादन व अनुवाद सहित प्रकाशन आदि तभी से होता चला आ रहा है जब से पुरातत्त्व विभाग की स्थापना हुई, तथा ऐपिग्राफिया इण्डिका ऐपि० कर्नाटिका आदि विशेष जर्नलों का प्रकाशन आरम्भ हुआ; किन्तु यह सामग्री उक्त जर्नलो में यत्र-तत्र बिखरी पड़ी थी और वह प्रायः जैनधर्म के इतिहास पर ग्रन्थ व लेख लिखनेवालो के लिए सरलता से उपलब्ध नही

थी। इस परिस्थिति मे एक बडा सुधार तब आया जब दक्षिण भारत के एक प्राचीन तीर्थ स्थान श्रवणबेलगोल मे पाये जाने वाले ५०० शिलालेखों का एक ही जिल्द मे प्रकाशन हुआ। तब से जैनधर्म के साहित्यिक व ऐतिहासिक लेखो मे एक सुदृढ वैज्ञानिक दृष्टिकोण का समावेश होने लगा। माणिकचन्द्र-दिगम्बर-जैन ग्रन्थमाला के सम्पादक प० नाथूराम प्रेमी की तीव्र इच्छा थी कि देश के अन्य भागो में बिखरे हुए व प्रकाशित जैन शिलालेखो का भी उसी रीति से संग्रह कराकर प्रकाशन करा दिया जाये। उन की इस इच्छा और प्रयास का ही यह फल हुआ कि प्रथम भाग मे श्रवणबेलगोल-शिलालेख-संग्रह के अतिरिक्त द्वितीय और तृतीय भागो में उन साढे आठ सौ लेखो का भी आकलन हो गया जिन की सूची डॉ० गेरिनो ने १९०८ में प्रकाशित की थी इस के पश्चात् लेखसंग्रह का कार्य बडा कठिन हो गया क्योकि इन की कोई व्यवस्थित सूची भी उपलब्ध नही थी। किन्तु डॉ० विद्याधर जोहरापुरकर ने बडे परिश्रम से उन छह सौ चौवन लेखो का सग्रह चौथे भाग मे कर दिया जो १९०८ से १९६० तक प्रकाश मे आये थे। और अब उन्ही के द्वारा सगृहीत किया गया यह पाँचवा संग्रह प्रकाशित हो रहा है, जिस मे उन तीन सौ पचहत्तर जैन लेखो का सकलन है जिन का अन्यत्र स्फुट रूप से प्रकाशन १९६० ई० के पश्चात् हुआ है। इस प्रकार इस ग्रन्थमाला के इन ५ सग्रहो मे २००० से ऊपर जैन लेखो का सकलन हो चुका है।

इन जैन शिलालेखो की अपनी विशेषता है। इन मे अन्य लेखो के सदृश राजाओ व राजवंशो की प्रशंसा तथा उन के द्वारा किये गये युद्धो, विजयो व राज्य-विस्तार आदि का वर्णन नही है। इन मे वर्णित घटनाएँ हैं—मन्दिरो का निर्माण, मूर्तियो की प्रतिष्ठा, जीर्णोद्धार व धार्मिक दानादि। इन घटनाओ के सम्बन्ध में ही यहाँ मुनियो की परम्पराओ का भी उल्लेख पाया जाता है और प्रसंगवश तत्कालीन व तद्देशीय नरेशो, मन्त्रियो व गृहस्थो के उल्लेख भी आये है। इस प्रकार इन लेखो की प्रेरणा का

मूलस्रोत धार्मिक है। इन मे हमे जो चिन्तन और विचार प्राप्त होता है वह है संसार की असारता और क्षणभगुरता, पारलौकिक हित की आकाक्षा तथा समाज में धर्म का प्रचार। ये लेख समाज के उस वर्ग का विवरण प्रस्तुत करते हैं जो अपने सासारिक सुख-साधनों का परित्याग कर समाज में अहिंसा व शान्ति की भावना बढाने तथा अपने सुख से ऊपर दूसरो के दु.खो का निवारण करने की श्रेयस्कर भावना और सुसंस्कार के प्रचार हेतु अपने जीवन को लगा देते थे। महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अनेक शिलालेखो में उन के उत्कीर्ण किये जाने का काल भी निर्दिष्ट है। इस से अनेक ग्रन्थकार मुनियो के काल निर्णय में व साहित्य में पायी जाने वाली पट्टावलियो के संशोधन में सहायता मिलती है। आनुषगिक उल्लेखो से अनेक राजनैतिक, सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियो की भी विशेष जानकारी प्राप्त हो जाती है। हमें पूर्ण आशा है कि इन शिलालेख-संग्रहो से जैन साहित्य और इतिहास के शोधकार्य में बडी सहायता मिल सकेगी।

डॉ० जोहरापुरकर ने लेख-संग्रह के अतिरिक्त इन लेखो का अध्ययन कर के नाना दृष्टियो से उन का विश्लेषण जैसा चौथे भाग की प्रस्तावना मे किया था वैसा तथा उस से भी अधिक जानकारी-पूर्ण विवरण प्रस्तुत ग्रन्थ की २१ पृष्ठीय प्रस्तावना में भी किया है। उन के इस सहयोग के लिए हम उन के बहुत कृतज्ञ है। इस ग्रन्थमाला को अपने संरक्षण में लेकर उस की सम्पुष्टि में अपनी पूर्ण तत्परता रखने हेतु हम ज्ञानपीठ के संस्थापक श्री शान्तिप्रसादजी, श्रीमती रमाजी तथा ज्ञानपीठ के मन्त्री श्री लक्ष्मीचन्द्रजी के भी बहुत अनुगृहीत हैं।

बालाघाट — *हीरालाल जैन*
मैसूर — *आ. ने. उपाध्ये*

प्रधान सम्पादक

प्राक्कथन

प्रस्तुत शिलालेखसंग्रह का प्रथम भाग डॉ० हीरालाल जैन द्वारा सम्पादित हो कर सन् १९२८ में प्रकाशित हुआ जिस में श्रवणबेलगुल के ५०० लेख हैं। तदनन्तर सन् १९०८ में प्रकाशित डॉ० गेरिनो की जैन शिलालेख सूची के अनुसार श्री विजयमूर्ति शास्त्री ने दूसरे तथा तीसरे भाग में ५३५ लेखो का संकलन किया तथा तीसरे भाग में डॉ० गुलाबचन्द्र चौधरी ने इन पर विस्तृत निबन्ध मे प्रकाश डाला। सन् १९५२ तथा १९५७ मे ये भाग प्रकाशित हुए। चौथे भाग मे हम ने सन् १९०८ से १९६० तक प्रकाशित ६५४ जैन लेखों का संकलन और अध्ययन प्रस्तुत किया था, इस के परिशिष्ट में नागपुर के ३२४ लेखों का संग्रह भी दिया था।

इस पाँचवें भाग मे सन् १९६० के बाद के वर्षों मे प्रकाशित ३७५ जैन लेखो का संकलन और अध्ययन प्रस्तुत कर रहा हूँ। यह कार्य पूरा करने के लिए मैसूर स्थित भारत सरकार के प्राचीनलिपिविज्ञ डॉ० गाइ द्वारा उन के ग्रन्थालय में अध्ययन की सुविधा मिली इस लिए हम उन के बहुत आभारी है। ग्रन्थमाला के प्रधान संपादको तथा भारतीय ज्ञानपीठ के अधिकारियों के भी हम आभारी है जिन के आग्रह और प्रोत्साहन से यह कार्य सम्पन्न हो सका। उन सभी विद्वानों के हम ऋणी हैं जिन्होने यहाँ संकलित लेखों को पहले सम्पादित किया है या उन का साराश प्रकाशित किया है। हम आशा करते हैं कि यह संग्रह जैन विषयों के अध्येताओं को उपयोगी प्रतीत होगा।

दीपावली
सन् १९६९
मंडला

—विद्याधर जोहरापुरकर

प्रस्तावना

१. साधारण परिचय

इस सग्रह में पिछले लगभग दस वर्षों में प्रकाशित ३७५ जैन शिला-लेखो का विवरण संकलित किया है।[१] पहले हम इन का साधारण परिचय प्रस्तुत करेंगे।

(अ) प्रदेशविस्तार—ये लेख भारत के नौ राज्यो तथा दो केन्द्र-शासित प्रदेशो में प्राप्त हुए हैं तथा एक लेख का चित्र पैरिस म्यूज़ियम से प्राप्त हुआ है। लेखो की प्रदेशानुसार संख्या इस प्रकार है—

महाराष्ट्र ४०, मैसूर ७५, मद्रास ७, आन्ध्र २५, मध्यप्रदेश ९८, राजस्थान २६, उत्तरप्रदेश १००, बिहार १, गुजरात १, दिल्ली १ तथा गोवा १।

(आ) भाषा व लिपि—इन लेखो मे प्राकृत, संस्कृत, कन्नड व तमिल इन चार मुख्य भाषाओ का उपयोग हुआ है (मराठी व हिन्दी के कुछ अंश कुछ लेखों में हैं किन्तु इन का ठीक-ठीक विवरण नही मिल सका)। इस दृष्टि से लेखों की संख्या का वर्गीकरण इस प्रकार है—

प्राकृत २, संस्कृत २५६, कन्नड ११० व तमिल ७। प्राकृत व संस्कृत के सातवी सदी तक के लेखों की लिपि ब्राह्मी है। बाद के संस्कृत लेख ब्राह्मी की उत्तराधिकारिणी नागरी लिपि में है। कन्नड लेख कन्नड लिपि में व तमिल लेख तमिल लिपि मे हैं। यहाँ नोट करने योग्य है कि

---

१ इस सकलन के लिए इस अवधि में प्रकाशित लगभग सात हजार शिलालेखों के विवरण का हम ने अध्ययन किया। इन में लगभग सात सौ जैनों से सम्बन्धित हैं। इस सग्रह के पूर्वप्रकाशित भागों की परम्परा के अनुसार इस में श्वेताम्बर सम्प्रदाय से सम्बद्ध लेखों का विवरण नहीं दिया गया।

महाराष्ट्र में प्राप्त लेखो में लगभग एक चौथाई तथा आन्ध्र में प्राप्त प्राय सभी लेख कन्नड भाषा में है।

(इ) उद्देश—इन लेखो में दो (क्र० १ व २) गुहानिर्माण के, ४० मन्दिरनिर्माण के तथा ५० आचार्यों व श्रावकों के समाधिमरण के स्मारक है। ४० लेखो मे जैन मन्दिरो व आचार्यों को दिये गये दानो का वर्णन है। एक-एक लेख मे व्रत का उद्यापन, दानशाला का निर्माण, कुँए का निर्माण तथा दो भट्टारको के विवाद का निपटारा यह वर्ण्य विषय है।[1] लगभग ५० लेखो मे यात्रियो के नाम अकित है। सब से अधिक १७५ लेख मूर्तिस्थापना के विषय मे है।

(ई) समय—सब लेख समय क्रमानुसार रखे गये है। इन मे सब से पुरातन सन् पूर्व दूसरी सदी का है। शताब्दी क्रम से लेखो की सख्या इस प्रकार है—सन् पूर्व दूसरी सदी १, सन् पूर्व प्रथम सदी १, ईसवी सन् की चौथी सदी १, सातवी सदी ३, आठवी सदी २, नौवी सदी ५, दसवी सदी १३, ग्यारहवी सदी ४४, बारहवी सदी ६०, तेरहवी सदी ४३, चौदहवी सदी १४, पन्द्रहवी सदी ३७, सोलहवी सदी २१, सत्रहवी सदी २४, अठारहवी सदी ११ तथा उन्नीसवी सदी २२। अन्त में दिये गये ६९ लेखो के समय का विवरण नही मिल सका। कई लेखो का समय लिपि के स्वरूप को देख कर पुरातत्त्व विभाग के अधिकारियो ने जैसा बताया है वैसा ही यहाँ नोट किया गया है। यह एक डेढ शताब्दी से आगे-पीछे का हो सकता है। जिन लेखो मे लिपि के आधार पर समय बताया है उन से कोई निष्कर्ष निकालते समय यह बात ध्यान मे रखनी चाहिए।

(उ) लेखो के कुछ मुख्य प्राप्तिस्थान—इस सकलन के लेखो का काफ़ी बडा भाग चार स्थानो से प्राप्त हुआ है।

---

१ क्रमश लेख क्रमांक ११८, १७३, २६३ तथा ३०४।

[१] महाराष्ट्र के परभणी जिले में पूर्णा नदी के तीर पर उखलद ग्राम है, यहाँ के नेमिनाथमन्दिर की जिनमूर्तियो के पादपीठों पर २३ लेख मिले है। इन में पहले सात लेखों में उल्लिखित भट्टारक उत्तर भारत के है अत: ये मूर्तियाँ उत्तर भारत के किसी स्थान में प्रतिष्ठित हुई थीं तथा बाद मे उखलद लायी गयी ऐसा प्रतीत होता है, इन का समय सं० १२७२ से सं० १५४८ तक का है। इन मे अन्तिम सं० १५४८ का लेख तो ४१ मूर्तियों के पादपीठों पर है (इस शिलालेखसग्रह के चतुर्थ भाग मे बताया गया है कि यही लेख नागपुर के विभिन्न मन्दिरो मे स्थित ७७ मूर्तियो के पादपीठो पर है)। बाद के सोलह लेख महाराष्ट्र के ही कारंजा व लातूर इन दो स्थानो के भट्टारको से सम्बन्धित है तथा अधिकतर सोलहवी-सत्रहवी सदी के है।

[२] मध्यप्रदेश के उत्तर कोने में स्थित ग्वालियर के किले मे २५ लेख प्राप्त हुए हैं। इन से पन्द्रहवी-सोलहवी सदी के ग्वालियर के राजाओ, भट्टारको तथा श्रावको के विषय मे काफी जानकारी मिलती है।

[३] मध्यप्रदेश के दतिया जिले मे स्थित सोनागिरि पहाड़ी के विभिन्न मन्दिरो में ५२ लेख प्राप्त हुए है। इन में से एक सातवी सदी का और छह बारहवी से चौदहवी सदी तक के है। अत: प० नाथूरामजी प्रेमी ने इस स्थान की प्राचीनता के बारे में सन्देह प्रकट करते हुए जो विचार प्रकट किये थे (जैन साहित्य और इतिहास पृ० ४३८) उन में अब सुधार करना होगा। हाँ, सिद्धक्षेत्र के रूप में इस को प्रसिद्धि का इन प्राचीनतर लेखो से पता नही चलता। इस स्थान के भट्टारक गोपाचल पट्ट के अधिकारी कहलाते थे। उन के विषय में आगे अधिक स्पष्टीकरण दिया है।

[४] उत्तरप्रदेश के दक्षिण-पश्चिम कोने मे झाँसी जिले मे बेतवा नदी के तीर पर स्थित देवगढ़ एक प्राचीन स्थान है। इस लेखसंग्रह के दूसरे भाग में यहाँ का नौवी सदी का एक लेख है तथा तीसरे भाग मे पन्द्रहवी सदी के दो लेख है। प्रस्तुत संकलन में यहाँ से प्राप्त ९० लेखों का विव-

रण है। इन मे नौवी सदी से पन्द्रहवी सदी तक के २० लेख हैं। शेष लेखो का समय अनिश्चित है।

इन के अतिरिक्त ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण अन्य कुछ स्थानो का आगे यथास्थान उल्लेख किया है।

२. लेखो से ज्ञात जैन साधुसघ का स्वरूप

इस सकलन के नौवी शताब्दी तक के लेखो मे (तथा बाद के भी बहुत से लेखो में) वर्णित जैन मुनियो के विषय मे यह ज्ञात नही होता कि वे साधुसंघ की किस शाखा के सदस्य थे। लगभग ८० लेखो मे साधुसंघ के भेद-प्रभेदो के नाम मिलते हैं। इन का विवरण आगे दिया जाता है।

(अ) द्राविड संघ—सन् ९१५ के वजीरखेड ताम्रपत्रो मे (ले० १४-१५) इस सघ के विशेषवीरगण—वीर्णाय्य अन्वय के लोकभद्र के शिष्य वर्धमानगुरु को मिले हुए ग्रामदान का वर्णन है। चन्दनापुरी की अमोघ-वसति तथा वडनेर की उरिअम्मवसति की देखभाल उन के द्वारा होती थी। यह लेख द्राविड सघ के अब तक मिले हुए सब उल्लेखो मे प्राचीन-तम है (पिछले सग्रह मे प्राचीनतम लेख भाग २ का क्र० १६६ सन् ९९० के आसपास का है) तथा इस मे वर्णित वीरगण-वीर्णाय्य अन्वय का अन्य किसी लेख में उल्लेख नही मिला था (पिछले संग्रह मे उल्लिखित इस सघ का एकमात्र प्रभेद नन्दिगण-अरुगल अन्वय है)। मैसूर प्रदेश के बाहर मिला हुआ द्राविड सघ का यह पहला व एकमात्र उल्लेख है। सन् १०८७ के पुदूर के लेख (क्र० ५६) मे इस सघ के पल्लवजिनालय के कनकसेन आचार्य को मिले हुए भूमिदान का वर्णन है। सन् ११६७ के उज्जिलि के लेख (क्र० १०४) मे द्राविड सघ-सेनगण-कौरूर गच्छ के इन्द्रसेन आचार्य को मिले हुए भूमिदान का वर्णन है। इस सघ के साथ सेनगण का सम्बन्ध पहले ज्ञात नही था (पिछले सग्रह मे तथा इस संग्रह के भी कुछ लेखो मे सेनगण मूलसघ के अन्तर्गत बताया गया है, कौरूर गच्छ का

सम्बन्ध पिछले संग्रह में शूरस्थ गण के साथ पाया गया है, पिछले संग्रह मे सेनगण के पुस्तक गच्छ, पुष्कर या पोगिरि गच्छ एवं चन्द्रकवाट अन्वय के नाम मिलते है)। इस संकलन का द्राविड संघ का अन्तिम लेख (क्र० १११) सन् ११९४ का है, यह येत्तिनहट्टि मे मिला है तथा इस मे इस सघ के अजितसेन आचार्य के स्वर्गवास का उल्लेख है।

(आ) यापनीय संघ—इस संघ के वन्दियूर गण के महावीर पण्डित को मिले हुए दान का उल्लेख धर्मपुरी के ११वी सदी के लेख मे है (क्र० ७०)। वरंगल के सन् ११३२ के लेख में (क्र० ८६) इसी गण के गुणचन्द्र महामुनि के स्वर्गवास का उल्लेख है। तेगली के १२वी सदी के लेख मे (क्र० १२५) वर्णित वडियूर गण भी सम्भवत इसी वन्दियूर गण से अभिन्न है, इस के आचार्य नागवीर के एक शिष्य द्वारा मूर्ति-स्थापना की गयी थी। (पिछले सग्रह मे इस गण का कोई उल्लेख नही मिला था)। इस सघ के कण्डूर गण के आचार्य सकलेन्दु के शिष्य नाग-चन्द्र के शिष्य ने मूर्तिस्थापना की थी ऐसा लोकापुर के १२वी सदी के लेख (क्र० ११७) से ज्ञात होता है (पिछले सग्रह मे इस गण के चार लेख सन् ९८० से तेरहवी सदी तक के है, यापनीय संघ के अन्य छह गणों के नाम पिछले संग्रह मे मिले हैं—कुमिलि या कुमुदि, पुन्नागवृक्षमूल, कारेय, कनकोपलसंभूतवृक्षमूल, श्रीमूलमूल तथा कोटिमडुव)।

(इ) वागड संघ—इस के आचार्य सुरसेन का उल्लेख कटोरिया के सन् ९९५ के एक मूर्तिलेख (क्र० २१) में मिलता है। इसी सघ के धर्मसेन आचार्य का उल्लेख सन् १००४ के अजमेर सग्रहालय के एक मूर्ति-लेख (क्र० ३०) मे मिलता है (पिछले संग्रह मे इस संघ का नाम नहीं मिला था, काष्ठासघ के चार गच्छो मे एक का नाम वागड है किन्तु इस के भी कोई लेख प्राप्त नही हैं।)।

(ई) पुन्नाट गुरुकुल—इस परम्परा के आचार्य अमृतचन्द्र के शिष्य विजयकीर्ति का नाम सुलतानपुर के सन् ११५४ के आसपास के एक मूर्तिलेख

(क्र० ९८) मे मिला है (पुन्नाट संघ बाद में काष्ठासंघ के एक गच्छ के रूप मे परिवर्तित हुआ तथा इस का नाम भी लाडबागड गच्छ हो गया, इस का विवरण हमारे 'भट्टारक सम्प्रदाय' मे दिया है, शिलालेखो में पुन्नाट परम्परा का उल्लेख इसी लेख मे सर्वप्रथम मिला है)।

(उ) माथुरसंघ—नासून से प्राप्त सन् ११६० के मूर्तिलेख(क्र० १०१) में इस सघ के आचार्य चारुकीर्ति का उल्लेख मिलता है। बघेरा के सन् ११७५ के मूर्तिलेख (क्र० १०७) मे भी माथुर सघ के श्रावक दूलाक का नाम उल्लिखित है (इस सघ के बारहवी सदी के तीन उल्लेख पिछले संग्रह मे हैं, काष्ठासंघ के एक गच्छ के रूप मे इस के तीन लेखो का विवरण आगे देखिए)।

(ऊ) काष्ठासंघ—ग्वालियर से प्राप्त सन् १४५३ के मूर्तिलेख में इस सघ के माथुर गच्छ के किसी पण्डित का नाम प्राप्त होता है (क्र० २०३)। सोनागिरि के सन् १५४३ के मूर्तिलेख (क्र० २३९) मे काष्ठासंघ-पुष्करगण के भ० जससेन का उल्लेख है (हम ने भट्टारक सम्प्रदाय मे बताया है कि पुष्करगण माथुरगच्छ का नामान्तर था, इसी पुस्तक मे सं० १६३९ का फतेहपुर का एक लेख दिया है (पृ० २२९) जिस मे इस परम्परा के भ० यशःसेन का उल्लेख है, ये यश सेन सम्भवत उपर्युक्त जससेन से अभिन्न थे)। इस सकलन का काष्ठासघ का अगला लेख सन् १६१३ का है, यह उखलद मे प्राप्त मूर्तिलेख है (क्र० २५६) तथा इस मे भ० जसकीर्ति का नाम अकित है। इन के गच्छ का नाम नहीं बताया है। सोनागिरि में प्राप्त सन् १६४४ के लेख में (क्र० २६६) काष्ठासंघ-नन्दीतटगच्छ के भ० केशवसेन, भ० विश्वकीर्ति तथा ब्र० मगलदास की चरणपादुकाएँ प्रतिष्ठित होने का उल्लेख है (हम ने भट्टारक सम्प्रदाय मे (पृ० २९४) इन तीनो से सम्बद्ध अन्य विवरण दिया है)।

(ऋ) मूलसघ—इस संघ के ५ गणो के लगभग ६० उल्लेख इस संकलन मे आये हैं। इन का विवरण इस प्रकार है।

(१) सूरस्थ गण—कादलूर ताम्रपत्र में (क्र० १७) इस गण के एलाचार्य को मिले हुए ग्रामदान का वर्णन है। सन् ९६२ के इस लेख में इन के पूर्व के चार आचार्यों के नाम—प्रभाचन्द्र, कल्नेलेदेव, रविचन्द्र तथा रविनन्दि—दिये हैं अत इस परम्परा का अस्तित्व सन् ९०० के लगभग प्रमाणित होता है (इस गण का यही प्राचीनतम लेख है)। अंक्किगुन्द के १२वी सदी के लेख (क्र० ११८) में इस गण के जयकीर्ति भट्टारक की शिष्याओ के व्रत-उद्यापन का वर्णन है। अलदगेरि के तेरहवी सदी के तीन लेखो में (क्र० १६३-५) इस गण की नागचन्द्र—नन्दिभट्टारक—नयकीर्ति इस आचार्यपरम्परा का उल्लेख है। ये लेख इन के शिष्यों के समाधिमरण के स्मारक हैं। इस संकलन में इस गण के उपभेदों का उल्लेख नही आ पाया है (पिछले संग्रह मे कौरूर गच्छ तथा चित्रकूटान्वय इन उपभेदो के नाम मिले हैं, कही-कहीं सूरस्थगण सेनगण का नामान्तर माना गया है)।

(२) सेनगण – पन्द्रहवी सदी के केरूर के मूर्तिलेख (क्र० २२८) मे इस गण के गुणभद्र आचार्य का उल्लेख है। सन् १६१४ के सोनागिरि के मूर्तिलेख (क्र० २५८) में पुष्करगच्छ-ऋषभसेनान्वय के विजयसेन व लक्ष्मीसेन के नाम उल्लिखित हैं (यहाँ सेनगण का नाम नही है किन्तु उक्त गच्छ व अन्वय इसी गण के अन्तर्गत थे यह अन्य लेखो से मालूम हुआ है)। यही के सन् १८७३ के दो मूर्तिलेखो में इस गण के लक्ष्मीसेन का उल्लेख है (पिछले संग्रह में सेन-परम्परा के उल्लेख सन् ८२१ से प्राप्त हुए है, इस के ज्ञात उपभेदो का ऊपर द्राविड संघ के परिच्छेद में उल्लेख कर चुके हैं)।

(३) देशीगण—सन् १०८७ के पुडूर के लेख (क्र० ५५) में इस गण के पुस्तकगच्छ के पद्मनन्दि मलधारिदेव को मिले हुए भूमि दान का वर्णन है। हलेबीड के ११वी सदी के लेख में इसी गच्छ के नेमिचन्द्र भट्टारक के शिष्यों द्वारा मूर्ति स्थापना का उल्लेख है (क्र० ६६)। चितापुर के १२वी

सदी के लेख में इसी गच्छ के एक मन्दिर के जीर्णोद्धार का वर्णन है (क्र० १२६)। इसी समय के पेद्दतुबळम् के मूर्तिलेख (क्र० १३०) में इस गच्छ के चन्द्रकीर्ति भट्टारक का नाम प्राप्त होता है। स्तवनिधि के सन् १४०० के लेख (क्र० १८३) मे इस गच्छ के वीरनन्दि के उपदेश से मन्दिर निर्माण होने का उल्लेख है। हुगरिटगे के सन् १२२४ के लेख मे पुस्तकगच्छ के गोमिनि अन्वय के देवचन्द्र आचार्य के समाधिमरण का उल्लेख है (क्र० १३९) इस अन्वय का यह एकमात्र उल्लेख ज्ञात हुआ है (अन्यत्र देशीगण-पुस्तकगच्छ को कोण्डकुन्दान्वय के अन्तर्गत कहा गया है)। खजुराहो के सन् ११५८ के लेख (क्र० १००) मे देशी गण के राजनन्दि के शिष्य भानुकीर्ति पण्डित का नाम प्राप्त हुआ है, इस में गच्छ या अन्वय का कोई उल्लेख नही है (पिछले सग्रह में देशीगण के लेख सन् ८६० से प्राप्त हुए हैं, इस के ज्ञात अन्य उपभेद आर्यसघग्रहकुल, चन्द्रकराचार्याम्नाय तथा मैणदान्वय हैं, पुस्तकगच्छ के उपभेदो मे पिछले संग्रह मे पनसोगेबलि, इंगुलेश्वर बलि तथा बाणदबलि इन तीन के नाम उल्लिखित है)।

(४) **काणूर गण**— सन् ११२५ के कोलनुपाक के लेख मे इस गण के मेषपाषाण गच्छ के कुछ आचार्यों के नाम है (क्र० ८१) किन्तु इसका विवरण नही मिल सका (पिछले सग्रह मे इस गण के लेख दसवी सदी से प्राप्त हुए है, इसके अन्य ज्ञात गच्छो का नाम तिन्त्रिणीक तथा पुस्तक है)।

(५) **बलात्कार गण**— इस का नामान्तर सरस्वती गच्छ है। उखलद तथा सोनागिरि मे प्राप्त सन् १२१५ के मूर्तिलेखो (क्र० १३५–८) में इस गच्छ के धर्मचन्द्र भट्टारक का उल्लेख मिला है (इनमे गण का नाम नही है, केवल मूल-सघ-सरस्वती गच्छ का उल्लेख है)। केभावी के सन् १३४० के लेख (क्र० १८०) मे इस गण के लोकचन्द्र आचार्य के समाधिमरण का उल्लेख है।

चित्तौड के सन् १३०० के लेख (क्र० १५२) से उत्तरभारत मे इस

गण की आचार्य परम्परा इस प्रकार मालूम हुई है—केशवचन्द्र (जो तीन विद्याओ मे पारंगत थे तथा जिनके एक सौ एक शिष्य थे)—देवचन्द्र-अभयकीर्ति—वसन्तकीर्ति—विशालकीर्ति—शुभकीर्ति—धर्मचन्द्र (जिनके शिष्य पुण्यसिंह ने मानस्तम्भ की स्थापना उक्त वर्ष मे की थी)। देवगढ के एक स्तम्भलेख (क्र० १७२) मे केशवचन्द्र, अभयकीर्ति तथा वसन्तकीर्ति के नाम है। चित्तौड के एक अन्य लेख मे (क्र० १५३) विशालकीर्ति—शुभकीर्ति—धर्मचन्द्र यह परम्परा उल्लिखित है। इस संग्रह के प्रथम भाग के एक लेख मे वसन्तकीर्ति—विशालकीर्ति—शुभकीर्ति—धर्मभूषण यह परम्परा दी है (क्र० १११) यहाँ संकलित लेखो से उक्त आचार्यों के समयनिर्धारण मे सहायता मिलेगी। इन के अभाव मे पट्टावली के आधार पर हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में जो समयनिर्देश किया था उस मे अब सुधार करना होगा। वसन्तकीर्ति के पूर्ववर्ती तीन आचार्यों का शिलालेखीय उल्लेख भी पहली बार इस मे ज्ञात हुआ है।

उत्तर भारत मे बलात्कारगण की सात शाखाएँ पन्द्रहवी सदी में स्थापित हुईं, इनका विवरण हमारे भट्टारक सम्प्रदाय मे दिया है। इस संकलन मे इन के विभिन्न आचार्यो के जो लेख प्राप्त हुए है उन का विवरण इस प्रकार है—सूरत शाखा के भ० विद्यानन्दि उखलद के दो मूर्तिलेखो (क्र० १९७ व २२०) मे सन् १४४२ तथा १४७० मे उल्लिखित है। दिल्ली-जयपुर शाखा के भ० जिनचन्द्र ग्वालियर और उखलद के सन् १४५७, १४६५ तथा १४९२ के मूर्तिलेखो (क्र० २०४-५ तथा २२७) में उल्लिखित है। नागौर शाखा के भ० धर्मकीर्ति का उखलद के सन् १४७० के मूर्तिलेख (क्र० २१९) मे उल्लेख है। अटेर शाखा के भ० सिंहकीर्ति ग्वालियर के सन् १४७४ के मूर्तिलेख (क्र० २२३) में उल्लिखित है। जेरहट शाखा के भ० ललितकीर्ति राणोद के सन् १६१८ के मूर्तिलेख (क्र० २५९) में उल्लिखित है (इस परम्परा के समय क्रम को देखते हुए यह लेख ललितकीर्ति के पट्टशिष्य धर्मकीर्ति का होना चाहिए, सम्भवतः लेख

पढ़ते समय उन का नाम अस्पष्ट या खण्डित होने से छूट गया है)। अटेर शाखा के भ० विश्वभूषण का उल्लेख सन् १६५१ तथा १६९० के सोनागिरि के दो लेखो (क्र० २६९ व २७२) मे है। इसी शाखा के भ० देवेन्द्रभूषण सन् १७८० के सोनागिरि के लेख (क्र० २७८) में उल्लिखित हैं। सन् १७९९ के यही के लेखो (क्र० २८३-४) में इसी शाखा के भ० जिनेन्द्रभूषण व महेन्द्रभूषण का उल्लेख है। यही के सन् १८११ के लेख में विश्वभूषण से सुरेन्द्रभूषण तक सात भट्टारको की परम्परा का वर्णन है (क्र० २८५) तथा सुरेन्द्रभूषण के समय के अन्य लेख (क्र० २८६-९ तथा २९३) भी यहाँ प्राप्त हुए है। इन के बाद इस परम्परा के भ० राजेन्द्रभूषण लेख क्र० २९७ और ३०१ मे तथा भ० चारुचन्द्रभूषण लेख क्र० ३०० व ३०५ मे उल्लिखित है, ये लेख भी सोनागिरि के ही हैं।

दक्षिण मे बलात्कारगण की जो शाखाएँ थी उन मे कारजा शाखा व उस की लातूर उपशाखा के लेख उखलद मे प्राप्त हुए है। इन मे सन् १५८४ मे धर्मचन्द्र, धर्मभूषण, देवेन्द्रकीर्ति, अजितकीर्ति यह परम्परा लेख क्र० २४२-४ मे उल्लिखित है। सन् १६१६ और १६२० के लेख क्र० २५७ तथा २६०-२ मे भ० विशालकीर्ति का तथा सन् १६४४ और १६५४ के लेख क्र० २६७-८ मे धर्मचन्द्र–धर्मभूषण–विशालकीर्ति–अजितकीर्ति इस परम्परा का उल्लेख है। पहले हम ने भट्टारक सम्प्रदाय में इस शाखा का जो विवरण दिया है उस मे इन लेखो से काफी वृद्धि हुई है।

३. लेखो से ज्ञात जैन श्रावक समाज का स्वरूप

उत्तर भारत का जैन गृहस्थ समाज विभिन्न जातियों मे विभाजित था। इन जातियो की परम्परागत संख्या ८४ है। इस संकलन में इन में से दस जातियो का उल्लेख मिलता है। इन का विवरण इस प्रकार है।

सन् ९२३ मे राजौरगढ के शान्तिनाथ मन्दिर के निर्माता सर्वदेव धर्कट कुल के थे (क्र० १६) (अन्यत्र इस कुल को धक्कड या धाकड़

जाति कहा गया है)।

सन् ११३३ के बडोह के मूर्तिलेख (क्र० ८७) में प्राग्वाट कुल के जाल्हण का नाम अंकित है (इस कुल का नाम अन्यत्र पोरवाड जाति के रूप में मिलता है)। इसी कुल के यशोनाग का वर्णन चित्तौड के १२वी सदी के लेख में (क्र० ११३) है तथा देवगढ के इसी समय के मूर्ति-लेख (क्र० १७१) मे वर्णित धन्नाक भो प्राग्वाट कुल के बताये गये हैं।

लखनऊ संग्रहालय के सन् ११५३ के मूर्तिलेख (क्र० ९७) में लम्बकंचुक अन्वय के गोहड का उल्लेख है (इस अन्वय का परिचित नामान्तर लमेचू जाति है)। सोनागिरि के सन् १८६८ के मूर्तिलेख (क्र० ३०१) में इसी अन्वय के उदयसेन व खड्गराज के नाम अंकित हैं।

सिरपुर के अन्तरिक्ष पार्श्वनाथ मन्दिर के सन् १२७८ के लेख में श्रीमाल वंश के संघपति जगसीह का उल्लेख है (क्र० १४४)।

चक्रनगर के सन् १२७९ के तीन मूर्तिलेखों में गोलाराटक अन्वय के भोजदेव व कीकदेव के नाम मिलते हैं (क्र० १४५-७) (इस का परिचित नाम गोलाराडा जाति है)। ग्वालियर के सन् १४६८ के मूर्तिलेख में (क्र० २०६) भी इस जाति का नाम मिलता है।

बघेरवाल जाति के साह जीजाक का उल्लेख चित्तौड़ के तेरहवीं सदी के तीन लेखों (क्र० १५३-५) में है। वहाँ के कीर्तिस्तम्भ के निर्माता के रूप में वे इतिहास में प्रसिद्ध हैं। उन के पुत्र पुण्यसिंह या पूर्णसिंह की विस्तृत प्रशंसा लेख क्र० १५३ में मिलती है। इस जाति का दूसरा महत्त्वपूर्ण उल्लेख रामपुरा के सन् १६०७ के लेखो (क्र० २५३-४) में मिलता है जिसमे वहाँ के दीवान पाथूशाह के परिवार का विस्तृत परिचय दिया गया है।

ग्वालियर के सन् १४६५ के मूर्तिलेख (क्र० २०५) में ऊकेश अन्वय के महोदेव का नाम अंकित है (इस अन्वय का परिचित नाम ओसवाल जाति है)।

उखलद के सन् १४७१ के मूर्तिलेख (क्र० २२०) मे सिंहपुर वंश के तेजा का नाम प्राप्त होता है (अन्यत्र इस वश का नाम सिंहपुरा जाति मिलता है)।

सोनागिरि के सन् १५४३ तथा १८६७ के मूर्तिलेखो में अग्रवाल जाति के गर्गगोत्र तथा मीतल गोत्र का उल्लेख मिला है (क्र० २३९ तथा ३००)।

रेवासा के सन् १६०४ के लेख मे खडेलवाल जाति के कुम्भा का उल्लेख है (क्र० २५१) तथा सोनागिरि के सन् १८२७ के मूर्तिलेख (क्र० २८८) में इसी जाति के सभासिंघ का नाम मिलता है। सोनागिरि के दो अन्य मूर्तिलेखो (क्र० ३०२-३) से सन् १८७४ मे इसी जाति के सेठ सुपुण्यचन्द का पता चलता है।[1]

दक्षिण भारत के श्रावको के उल्लेखो मे जाति नाम नही मिलते। कुछ लेखो मे उन के पद या व्यवसाय के सूचक नाम प्राप्त होते हैं। गावुण्ड या गामुण्ड (लेख क्र० १८, ३६ आदि) ग्राम प्रमुखो की उपाधि थी (इस का सक्षिप्त रूप गौडा या गौडा दक्षिण के व्यक्ति नामो मे अब भी मिलता है)। कम्मटकार (लेख क्र० ८०) टकसाल के कर्मचारियो का व्यवसायदर्शक नाम था। पेर्गडे या हेग्गडे नगर के अधिकारी का पदनाम था (लेख क्र० ८१, ९६ आदि) (कर्णाटक मे उपनाम के रूप मे हेग्गडे अब भी प्रचलित है)। सामन्त (लेख क्र० ४१), महाप्रभु (लेख क्र० ५४), दण्डनायक (लेख क्र० ५५), महावड्डव्यवहारि (लेख क्र० १२२), महाप्रधान (लेख क्र० १५०) ये अन्य पदनाम जैन व्यक्तियो के सम्बन्ध में मिले है।

---

१ पिछले सग्रह व हमारे भट्टारक मे सम्प्रदाय उल्लिखित अन्य जातियों के नाम ये हैं—राइकवाल, गगराडा, गोलसिंघारा, पल्लीवाल, गुजरपल्लीवाल, पद्मावतीपल्लीवाल, उज्जेनीपल्लीवाल, हुंबड, गोलापूर्व, परवार, सैतवाल, गगवाल, गंगेरवाल, जांगडा पोरवाड, जैसवाल, नरसिंहपुरा, नागद्रा, नेवा, बरहिया, भट्टपुरा, मेवाडा, रत्नाकर।

४. आर्यिका व श्राविका समाज

जैन संघ में आर्यिकाओ व श्राविकाओ का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। इस संकलन के लगभग ४० लेखों मे इन के नाम मिलते हैं।

नौवी शताब्दी के मेडूर के लेख (क्र० ९) मे मल्लवे बसदि का उल्लेख है, नाम से स्पष्ट है कि यह मन्दिर मल्लवे नामक श्राविका ने बनवाया था। वजीरखेड के सन् ९१५ के ताम्रपत्र (क्र० १५) मे वडनेर की उरिअम्मवसति का उल्लेख भी इसी प्रकार का है। कादलूर ताम्रपत्र मे (क्र० १७) सन् ९६२ मे गंगवंश की रानी कल्लब्बा द्वारा निर्मित मन्दिर का उल्लेख है। बम्बई सग्रहालय के दसवी सदी के एक लेख (क्र० २४) मे तिरुनंगै नामक महिला द्वारा श्रीनामुलूर के मन्दिर मे मूर्ति स्थापना का उल्लेख है। अजमेर संग्रहालय के सन् १००४ के लेख (क्र० ३०) मे महादेवी द्वारा स्थापित मूर्ति का उल्लेख है। कोलनुपाक के सन् १०६७ के लेख (क्र० ४०) के अनुसार चालुक्य वंश की रानी (नाम अस्पष्ट) ने वहाँ के मन्दिर को भूमिदान दिया था। देवगढ के सन् १०७० के लेख (क्र० ४३) मे मोहिनी द्वारा स्थापित पद्मावती मूर्ति का उल्लेख है। इंगळगी के सन् १०९४ के लेख (क्र० ५८) मे चालुक्य रानी जाकलदेवी द्वारा वहाँ के मन्दिर को दिये गये दान का वर्णन है। नासून के सन् ११५९ के लेख (क्र० १०१) मे सरस्वती मूर्ति की स्थापिका के रूप मे वोग का नाम दिया है। सुरपुरखुर्द के सन् ११७२ के लेखो (क्र० १०५-६) के अनुसार सूहवा ने वहाँ के मन्दिर मे स्तम्भो का निर्माण कराया था। अक्किगुद के १२वी सदी के लेख (क्र० ११८) मे पदुमिगौडि और सुगिगौडि द्वारा व्रत-उद्यापन के समय मूर्ति स्थापना का वर्णन है। इसी समय के पेद्दतुंबळम् के लेख (क्र० १३०) मे बोचिकब्बे द्वारा स्थापित पार्श्वमूर्ति का वर्णन है। अलदगेरि के १३वी सदी के (क्र० १६४) मे मायक्क नामक श्राविका के समाधिमरण का उल्लेख है। हिरेकोनति व हिरेअणजि के लेखो मे (क्र० १४२ तथा

१७५) भी दो श्राविकाओ के समाधिमरण का उल्लेख है, इन का समय तेरहवीं सदी है। स्तवनिधि के सन् १४०० के लेख (क्र० १८३) मे वहाँ के मन्दिर का निर्माण ललियादेवी द्वारा हुआ ऐसा कहा गया है। सोनागिरि के सन् १७९९ के लेख (क्र० २८१) मे वसुमती द्वारा चौबीस तीर्थंकरो के चरणो की स्थापना का वर्णन है। इन के अतिरिक्त अन्य कई लेखो मे मूर्ति स्थापक श्रावको के साथ उन की पत्नी, माता या बहन के नाम प्राप्त होते है।

इस संकलन में उल्लिखित आर्यिकाओ के नाम इस प्रकार है—देवश्री व ललितश्री (दसवी सदी, लेख क्र० १९), लवणश्री (ग्यारहवी सदी, लेख क्र० ४९), मेकुश्री (बारहवी सदी, लेख क्र० १००), सोना (लेख क्र० ३४५), सिरिमा (लेख क्र० ३५२), पद्मश्री, संजमश्री, रत्नश्री, ललितश्री व जयश्री (लेख क्र० ३५४)।

५. राजाश्रय का विवरण

इस सकलन के लगभग ६० लेखो मे भारत के विभिन्न प्रदेशों के राजाओ, सामन्तो या अन्य अधिकारियो के नाम मिलते है तथा जैनो के धर्मकार्यो मे उन के प्रत्यक्ष या परोक्ष सहयोग का इन लेखो से पता चलता है। इन का विवरण इस प्रकार है।

गुप्त—विदिशा के मूर्तिलेखो (क्र० ३) मे गुप्त वश के सम्राट् रामगुप्त के शासनकाल का उल्लेख है, इस वश के समय के जैन लेखों मे यह सब से पुरातन है (पिछले संग्रह में कुमारगुप्त, स्कन्दगुप्त व बुधगुप्त के राज्यकाल के लेख प्राप्त हुए थे)।

सिन्द—बेळ्ळट्टि के दानलेख (क्र० ८) में सिन्द कुल के राज्य में दुर्गराजनिर्मित मन्दिर का उल्लेख है, यह लेख आठवी सदी का है। (पिछले संग्रह में इस वंश के ग्यारहवी-बारहवी सदी के चार लेख है)।

राष्ट्रकूट—मेडूर के दानलेख (क्र० ९) में इस वंश के सम्राट् जग-

तुग (गोविन्द ३) तथा उन के सामन्त सळुकि राजादित्य के शासनकाल का उल्लेख है (पिछले संग्रह में इस वंश के लेख सन् ८०२ से प्राप्त हुए है, यह लेख भी नौवी सदी के प्रारम्भ का है)। बजीरखेड ताम्रपत्र (क्र० १४) मे उल्लिखित चन्दनपुरी की अमोघवसति के नाम से अनुमान होता है उस का निर्माण जगत्तुग के पुत्र अमोघवर्ष के राज्य में हुआ होगा। लोकापुर के लेख (क्र० १३) में अमोघवर्ष के पुत्र कृष्ण २ के सामन्त लोकटे (जिस का अन्यत्र उल्लिखित नामान्तर लोकादित्य है) की प्रशसा उपलब्ध होती है, इस ने लोकपुर नगर की स्थापना की तथा उसे हरि-हर-जिन-बुद्ध मन्दिरो से विभूषित किया था। कृष्ण के पौत्र व उत्तराधिकारी इन्द्र ३ ने आचार्य वर्धमान को दो मन्दिरो के लिए आठ गाँव दान दिये थे (क्र० १४-१५)। इसी वंश के सामन्त शकरगड (जो कृष्ण ३ के अधीन थे) ने कोलनुपाक मे मन्दिर बनवाया था (क्र० ४०) (यह बाद मे कुलपाक के माणिक स्वामी के नाम से तीर्थक्षेत्र के रूप मे प्रसिद्ध हुआ)।

गंग—इस वश के राजा मारसिंह ने उस की माता द्वारा निर्मित जिन मन्दिर के लिए सन् ९६२ मे एक गाँव दान दिया था (लेख क्र० १७) (पिछले संग्रह में इस वंश के कई लेख है जिन में प्राचीनतम पाँचवी सदी का है)।

परमार—इस बंश के राजा भोजदेव के समय का मूर्तिलेख (क्र० ३२) भोजपुर मे मिला है। वही का एक अन्य मूर्तिलेख (क्र० ५९) इसी वश के राजा नरवर्मा के समय का है (पिछले संग्रह मे भोजदेव व उदयादित्य के राज्यकाल के दो लेख हैं)।

कल्याण के चालुक्य—इस वश के सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल की रानी ने कोलनुपाक के जिन मन्दिर को सन् १०६७ मे भूमिदान दिया था (लेख क्र० ४०)। कुप्पिवाळ के सन् १०४५ के दानलेख मे भी इसी राजा के राज्य का उल्लेख है (क्र० ३६)। सम्राट् भुवनैकमल्ल के शासनकाल के

तीन लेख हैं (क्र० ४१, ४२, ४४)। इन मे महामण्डलेश्वर जटाचोळभीम, सामन्त गिरिगोटेमल्ल, सामन्त पंपपेर्मानिडि, वाजिकुल के सामन्त कालिमय्य तथा दण्डनायक नागवर्मा के नाम भी मिलते है। दद्दल के सन् १०६९ के लेख (क्र० ४१) के अनुसार वहाँ के जिन मन्दिर को सामन्त गिरिगोटेमल्ल का नाम दिया गया था तथा तडखेल के सन् १०७१ के लेख (क्र० ४४) के अनुसार कालिमय्य व नागवर्मा दण्डनायक ने वहाँ के मन्दिर को दान दिये थे। सम्राट् जगदेकमल्ल के शासनकाल मे दण्डनायक पोळलमय्य ने तलेखान के जिनमन्दिर को सन् १०७२ मे कुछ दान दिया था (लेख क्र० ४५)। सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के शासनकाल के नौ लेख है। चितलघाट के सन् १०८१ के लेख (क्र० ५२) के अनुसार इन के महासामन्त कद्दरस ने आचार्य माधवचन्द्र को कुछ दान दिया था। अल्लदुर्गम् के सन् १०८४ के लेख (क्र० ५३) मे महामण्डलेश्वर आहवमल्ल पेर्मानिडि द्वारा शान्तिनाथ मन्दिर को दिये गये दान का वर्णन है। कोण्णूर के सन् १०८७के लेख मे रट्टवंशीय सामन्त जयकर्ण के अधीन महाप्रभु निधियम के कुछ दान का वर्णन है (लेख क्र० ५४)। पुदूर के सन् १०८७ के लेख (क्र० ५५) के अनुसार महामण्डलेश्वर जत्तरस ने पार्श्वनाथ पूजा के लिए दण्डनायक तिक्कप्प को कुछ भूमि सौपी थी। यहीं के इसी वर्ष के लेख (क्र० ५६) मे महामण्डलेश्वर हल्लवरस द्वारा पल्लवजिनालय को दिये गये दान का वर्णन है। इंगळगी के सन् १०९४ के लेख (क्र० ५८) मे सम्राट् की रानी जाकलदेवी के दान व मूर्ति स्थापना का वर्णन है। कोलनुपाक के सन् ११२५ के लेख (क्र० ८१) मे राजकुमार सोमेश्वर ने दण्डनायक माधिमय्य को प्रार्थना पर अम्बिकादेवी के मन्दिर को एक ग्राम दान दिया था ऐसा वर्णन है। बोधन और गोब्बूर के लेखो (क्र० ७२ व ८०) मे भी त्रिभुवनमल्ल के राज्य का उल्लेख है। इस वश के अगले सम्राट् भूलोकमल्ल के राज्यकाल मे सन् ११३० मे गोर्ट मे आचार्य त्रिभुवनसेन का समाधि-लेख (क्र० ८२) स्थापित

हुआ था। सम्राट् जगदेकमल्ल के राज्यकाल मे सन् ११४८ मे हेर्गडे मादिराज व आदित्य नायक ने कुयिबाळ के मन्दिर को दान दिया था (लेख क्र० ९६) (पिछले संग्रह मे इस राजवंश के कई लेख हैं जिन मे प्राचीनतम सन् ९९० का है)।

कदम्ब—इस वंश के महामण्डलेश्वर मल्लदेव के राज्य मे दण्डनायक माचरस ने पार्श्वनाथ मन्दिर को दान दिया था ऐसा गुंडबले के लेख (क्र० ९०) से ज्ञात होता है (इस वंश की मुख्य शाखा के ११ और सामन्तो के १५ लेख पिछले सग्रह मे है जिन मे सब से पुराने पाँचवी सदी के है)।

चोल—उज्जिलि के दानलेख (क्र० १०४) मे श्रीवल्लभ चोल महाराज द्वारा इन्द्रसेन आचार्य को दिये गये दान का वर्णन है। यह लेख बारहवी सदी का है (इस वश को मुख्य शाखा के २८ लेख पिछले संग्रह मे है जिन मे सब से पुराना लेख सन् ९४५ का है)।

यादव—देवगिरि के यादव राजा कन्नर के राज्यकालमे देशीगण के आचार्यों को सन् १२४८ मे कुछ दान मिला था (लेख क्र० १४१)। इसी वश के राजा रामचन्द्र के समय सन् १२७१ मे हिरेकोनति मे एक श्राविका का समाधिलेख (क्र० १४२) स्थापित हुआ था। सन् १२८३ का सुतकोटि का समाधिलेख (क्र० १४८) भी रामचन्द्र के राज्यकाल का है। हिरेअणजि के सन् १२९३ के दान लेखों (क्र० १५०-१) मे रामचन्द्र के राज्य मे महाप्रधान परशुराम के शासनकाल का उल्लेख है। यही पर एक श्राविका का समाधिलेख (क्र० १७५) इसी राजा के समय का है (पिछले संग्रह मे यादव वंश के २४ लेख हैं जिन मे सब से पुराना सन् ११४२ का है)।

खुमाण (गुहिलोत)—चित्तौड के एक खण्डित लेख (क्र० ११३) मे बारहवी सदी के खुमाण वश के राजा जैत्रसिंह का उल्लेख है। यहीं के एक अन्य लेख (क्र० १५३) मे आचार्य धर्मचन्द्र का सम्मान करने

वाले जिस वीर हमीर का उल्लेख है वह भी सम्भवत. इस वंश का राजा था (पिछले संग्रह मे इस वंश का कोई लेख नही मिल सका था)।

चाहमान—हथूडी के सन् १२८८ के दानलेख (क्र० १४९) में इस वंश के सामन्तसिंह के राज्य का उल्लेख है (पिछले संग्रह में इस वंश की विभिन्न शाखाओ के आठ लेख हैं जिन मे सब से पुराना सन् ११३४ का है)।

विजयनगर—दक्षिण के इस साम्राज्य के राजा हरिहर के मन्त्री बैच के पुत्र इरुगप दण्डनायक की प्रशंसा पानुगल्लु के सन् १३९७ के लेख (क्र० १८९) मे मिलती है। इरुगप द्वारा एक जिन मन्दिर के निर्माण का वर्णन सन् १४०२ के आनेगोदि के लेख (क्र० १९२) में है। सन् १५१५ के खबदकोणे के लेख (क्र० २३२) मे सम्राट् कृष्णदेवराय के सामन्त विजयप्प वोडेय द्वारा आचार्य वीरसेन को दिये गये दान का वर्णन है। •मकी के सन् १५१५ के दानलेख (क्र० २३१) मे इम्मडि देवराज के शासन का उल्लेख है। केरवसे के सन् १४५० के दानलेख में (क्र० २०१) वीरपाण्ड्यदेव का तथा जलोल्ली के सन् १५४५ के मन्दिर लेख (क्र० २४०) में गेरसोप्पे के कृष्णभूपाल का प्रादेशिक शासक के रूप मे उल्लेख है, ये दोनो विजयनगर के सम्राटो के सामन्त थे (पिछले संग्रह मे विजयनगर राज्य के कई लेख है जिन मे सब से पुराना सन् १३५३ का है)।

तोमर—ग्वालियर के तोमर वश के १५वी सदी के राजा डूंगरसिंह और कीर्तिसिंह का उल्लेख वहाँ के कई मूर्तिलेखो मे है (लेख क्र० १९९, २०२, २०५-६ आदि) (पिछले सग्रह मे भी इन के कुछ लेख हैं)।

कूर्म (कछवाह)—इस वश के राजा रायमल व उन के मन्त्री देई-दास का उल्लेख रेवासा के सन् १६०४ के मन्दिरलेख मे (क्र० २५१) मिला है (पिछले संग्रह मे कछवाहो की पुरानी शाखाओ के दो लेख सन् ९७७ व १०८८ के है)।

चन्द्रावत—रामपुरा के चन्द्रावत राजा अचलदास तथा उस के पौत्र दुर्गभानु का वर्णन वहाँ के सन् १६०७ के लेख (क्र० २५३-४) मे है। इन्होने बघेरवाल जाति के साहू जोगा और पाथू (पदारथ) को मन्त्रि-पद पर नियुक्त किया था। दुर्गभानु के पुत्र चन्द्र ने पाथूसाहू को मुख्य मन्त्री बनाया था। इन की वीरता व धर्म कार्यों के वर्णन के कारण यह लेख महत्त्वपूर्ण है। इस वंश का यह प्रथम जैन लेख प्रकाशित हुआ है।

मुगल—बादशाह जहाँगीर के राज्य में राणोद में सन् १६१८ में मूर्तिप्रतिष्ठा उत्सव हुआ था (ले० क्र० २५९)। उपर्युक्त चन्द्रावत राजा भी बादशाह अकबर व जहाँगीर के सामन्त थे (पिछले संग्रह में भी मुगल राज्यकाल के कई लेख है)।

अन्य राजा व सामन्त—कई लेखो में कुछ अन्य राजाओ व सामन्तो का उल्लेख मिला है जिन के वश, राज्य या प्रभावक्षेत्र के बारे में निश्चित जानकारी प्राप्त नही है। सन् ९२३ के राजौरगढ लेख (क्र० १६) में राजा पुलीन्द्र व सावट के नाम उल्लिखित है। देवगढ के सन् ११५४ के लेख (क्र० ९९) में महासामन्त उदयपाल का नाम अंकित है। यहीं के १२वी सदी के लेख (क्र० १३१) मे राजा वल्लट का नाम प्राप्त होता है। उखलद के दो मूर्तिलेखो (क्र० १३६-७) में सन् १२१५ में राय प्रतापदमन व राय हमीर उल्लिखित है। देवगढ के अनिश्चित समय के दो लेखो (क्र० ३७० तथा ३७२) में चन्देरी के राजा दुर्जनसिंह तथा महाराजकुमार तेजसिंह का उल्लेख है। ओर्छा के बुन्देल राजा जुगराज सन् १६२४ के सोनागिरि के मूर्तिलेख (क्र० २६५) में उल्लिखित हैं। महाराजकुमार उदितसिंह और उन के अधीन अधिकारी गोपालमणि का सोनागिरि के सन् १६९० के लेख (क्र० २७२) में उल्लेख है। दतिया के राजा छत्रजीत (लेख क्र० २७८ व २८२), शत्रुजीत (लेख क्र० २७६), पारीछत (लेख क्र० २८५-७), विजयबहादुर (लेख क्र० २९६) तथा भवानीसिंह (लेख क्र० ३०४) सोनागिरि के लेखों में उल्लिखित हैं।

६. उपसहार

अन्त मे हम इस संकलन के कुछ विशिष्ट लेखो की उपलब्धियो की ओर विद्वानो का पुन ध्यान दिलाना चाहते है ।

(१) पाला के लेख से महाराष्ट्र में जैन साधुओ का अस्तित्व ईसवी सन् पूर्व दूसरी सदी मे प्रमाणित हुआ है।

(२) सोनागिरि के लेखो से इस स्थान की प्राचीनता सातवी सदी तक प्रमाणित हुई है।

(३) वजीरखेड ताम्रपत्रों से महाराष्ट्र मे द्राविड संघ के अस्तित्व का तथा सम्राट् अमोघवर्ष के नाम पर स्थापित जिनमन्दिर का पता चला है।

(४) द्वारहट के लेख से उत्तरप्रदेश के पर्वतीय जिलो मे जैन साध्वियो के विहार का प्रमाण मिला है।

(५) देवगढ के लेखो से इस स्थान की प्राचीनता व लोकप्रियता प्रमाणित हुई है।

(६) कोलनुपाक (प्रसिद्ध नामान्तर कुलपाक) के लेखो से इस तीर्थ की प्राचीनता नौवी सदी तक प्रमाणित हुई है।

(७) आन्ध्र प्रदेश के अनेक लेखो से वहाँ नौवी से बारहवी सदी तक जैन समाज की समृद्ध स्थिति का पता चलता है।

(८) चित्तौड के लेखो से कीर्तिस्तम्भ के स्थापक साह जीजा के परिवार का विस्तृत परिचय मिला है।

(९) रामपुरा के लेखो से वहाँ के दीवान पाथूशाह के परिवार का विस्तृत परिचय मिला है।

(१०) उखळद के लेखो से महाराष्ट्र मे सोलहवी-सत्रहवी सदी मे कार्यरत जैन भट्टारको के इतिहास को महत्त्वपूर्ण सामग्री मिली है।

इस संकलन को मिला कर इस शिलालेखसंग्रह मे लगभग २४०० लेखो का विवरण प्रकाशित हुआ है। इस सम्बन्ध मे अन्त मे हम कुछ विचार प्रकट करना चाहते हैं।

अब तक का यह अध्ययन मुख्यत. पराश्रित रहा है—अधिकाश लेख या उन के साराश पुरातत्त्व विभाग के अधिकारियों तथा अन्य जैनेतर विद्वानो द्वारा पहले प्रकाशित हुए थे। इन की अपनी सीमाएँ है अत. यह कार्य मन्द गति से हो पाता है। पिछले दस वर्षों को देखा जाये तो प्रतिवर्ष औसतन ४० लेख ही प्रकाश में आ सके है। अत. इस क्षेत्र मे कार्य को गति प्रदान करने के लिए आवश्यक है कि जैन विद्वान् और संस्थाएँ स्वयं अन्य अप्रकाशित लेखो के संकलन और प्रकाशन का कार्य हाथ मे ले।[1]

जैनेतर विद्वानो ने जिन लेखो का केवल साराश प्रकाशित किया है उन मे राजनीतिक इतिहास की ओर मुख्य ध्यान होने से जैन समाज के इतिहास के लिए उपयोगी बहुतसी बातें अनुल्लिखित रह गयी है। ऐसे सभी लेखो के मूल पाठ पूर्ण रूप मे सकलित हो कर प्रकाशित होने चाहिए।

हम आशा करते है कि इस ग्रन्थमाला के उत्साही संचालक इस दृष्टि से अगले भागो को तैयार कराने का प्रयास करेंगे।



१. श्वेताम्बर लेखों के प्रकाशन में श्री पूरणचन्द नाहर, श्री अगरचन्द नाहटा आदि ने जो कार्य किया है वह हमारे लिए मार्गदर्शक हो सकता है।

जैन-शिलालेख-संग्रह

मूल - लेख - विवरण

(समय-क्रमानुसार)

मूल-लेख-विवरण

१

पाला (पूना, महाराष्ट्र)

लिपि—सनपूर्व दूसरी सदी की, ब्राह्मी-प्राकृत

१ नमो अरहंतानं कातुन
२ द भदंत इंदरखितेन लेनं
३ कारापितं पोढि च सह—
४ सिधं

पूना जिले के पाला गाँव के समीप वन मे स्थित एक गुहा मे यह चार पक्तियो का लेख है। इस गुहा की खोज पूना विश्वविद्यालय के श्री० आर० एल० भिडे ने की। लेख की पहली पक्ति मे पचनमस्कारमंत्र की पहली पक्ति अंकित है। अन्य पक्तियो में कातुनद (जो सभवत किसी स्थान का नाम है) के भदत (आदरणीय) इदरखित (इन्द्ररक्षित) द्वारा लेन (गुहा) और पोढि (जलकुण्ड) बनवाये जाने का उल्लेख है। लिपि का स्वरूप देखते हुए यह लेख सनपूर्व दूसरी सदी का प्रतीत होता है। यह महाराष्ट्र मे प्राप्त जैन धर्म संबधी लेखों मे सब से पुरातन है। उपर्युक्त विवरण धर्मयुग साप्ताहिक, बम्बई के १५ दिसम्बर १९६८ के अंक मे डा० हसमुख धीरजलाल साकलिया के लेख में दिया है। वही प्रकाशित लेख के चित्र से ऊपर लेख का पाठ दिया है।

२

मुत्तुप्पट्टि (मदुरै, मद्रास)

लिपि—सनूपूर्व पहली सदी की, तमिल-ब्राह्मी

इस ग्राम के समीप की पहाडी पर जिनमूर्तियुक्त गुहा के बाजू मे यह लेख है—

नार्प ऊर् (चे) (य) (चे आ) चा (शा) न्

यह सभवत गुहा निर्माता का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० बी २८३

३

विदिशा (मध्यप्रदेश)

चौथी सदी (सन् ३७५ के लगभग), ब्राह्मी-संस्कृत

विदिशा नगर के समीप बेस नदी के तट पर एक टीले की खुदाई मे तीन तीर्थंकर-मूर्तियाँ मिली जो श्री राजमल मडवैया के प्रयत्न से सुरक्षित रूप से विदिशा के शासकीय सग्रहालय मे रखी गयी है। इन के पादपीठो पर लेख है। एक लेख पूर्णत. नष्ट हुआ है, दूसरा आधा टूटा है और तीसरा पूर्ण है। एक मूर्ति पर तीर्थंकर चन्द्रप्रभ का और एक पर तीर्थंकर पुष्पदन्त का नाम अकित है। इन की चरण चौकियो पर सिंह अकित है। सिर के पीछे प्रभामण्डल है। शिल्प विन्यास की शैली कुषाण काल और उत्तर-गुप्त काल के बीच की है। लेखो के अनुसार मूर्तियो का निर्माण महाराजाधिराज श्री रामगुप्त के शासनकाल में (सन् ३७५ के लगभग) हुआ था। उपरिलिखित विवरण दैनिक नई दुनिया, जबलपुर के २३-२-६९ के अंक मे प्रकाशित डॉ० कृष्णदत्त बाजपेयी के लेख में दिया गया है।

४

शिंगवरम् (दक्षिण अर्काट, मद्रास)

लिपि—सातवीं सदी की, तमिळ

इस ग्राम के निकट तिरुनाथर् कुण्रु नामक चट्टान पर यह लेख है। इस मे ५७ दिन के उपवास के बाद चन्द्रनंदि आशिरिगर् के दिवंगत होने का वर्णन है।

(मूल तमिल में मुद्रित)　　　　सा० इ० इ० १७ पृ० १०४

५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

लिपि—सातवी सदी की, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाडी के मदिर न० ७६ में रखी हुई प्रतिमा के पादपीठ पर यह लेख है। इस मे स्थापना कर्ता का नाम सिंघदेवपुत्र वडाक बताया है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३८१

६

ऐहोळे (बीजापुर, मैसूर)

लिपि—७वी सदी की, कन्नड (?)

यहाँ के जिन मदिर के पाषाणो पर निम्नलिखित नाम अंकित हैं (ये संभवत: यात्रियो के हैं)—

श्रीबिण अम्मन्

श्रीआनद स्थविर शिष्य

श्रीपिण्टवादि महेन्द्रर्

श्रीविसादन्
श्रीम (वा) ग्यमत्तन्
श्रीमौरेय
श्रीविज (डि) ओवजन्
श्रीगुणप्रियन् (प) त्त श्रीचित्राधिपश्री

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी २१२ से २१८

७

बेळ्ळट्टि (सागली, महाराष्ट्र)

लिपि—आठवी सदी की, कन्नड

मुळगुंद मे सिन्द राजा राज्य कर रहे थे उस समय दुर्गराज द्वारा निर्मित जिनमंदिर को श्रीभाग्य ने ५० मत्तर जमीन दान दी ऐसा इस लेख मे वर्णन है।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ४०

८

सित्तण्णवाशल (तिरुचिरपल्ली, मद्रास)

लिपि—आठवीं सदी की, तमिळ

पहाडी में खुदे हुए जैन मंदिर के इर्द गिर्द तथा मदिर के स्तम्भो पर ये आठ लेख है। इन में निम्नलिखित शब्द है (ये सम्भवत. यात्रियो के नाम है)—

श्रीयंकल
श्रीतिरुवाशिरियन्

श्रीकोकादित्तन्
तिरुक्को
श्रीपिरुतिवि (न) च्चन्
श्रीतिरुवि (र) म (न्)
श्रीकायचन्
वितिवकि शुणक्कुळम्

रि० इ० ए० १९६०-६१, प्रस्तावना पृ० ११ शि० क्र० बी ३२४ से ३३१

९

मेडूर (धारवाड, मैसूर)

नौवी शताब्दी का प्रारम्भ, कन्नड

राष्ट्रकूट सम्राट् प्रभूतवर्ष जगत्तुग (गोविन्द तृतीय) के अधीन बनवासि १२००० प्रदेश के शासक सळुकि वंश के राजादित्यरस द्वारा मल्लवे की बसदि (जिनमंदिर) के लिए मौनिगुरु के किसी शिष्य को कुछ भूमि दान दी गयी ऐसा इस लेख में वर्णन है। लेख किरुगुड्डु द्वारा उत्कीर्ण किया गया था।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० बी ५८२

यह लेख प्रोग्रेस रिपोर्ट ऑफ् दि कन्नड रिसर्च इन्स्टीट्यूट (१९५२-५७) में (पृ० ७०-७१ कन्नड) में पूर्ण रूप में छपा है।

१०-११-१२

एलोरा (औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

लिपि—९वीं या १०वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

गुहा नं० ३३ जगन्नाथसभा में ये तीन लेख अंकित हैं। एक में नागनंदि का नाम है। दूसरे में किसी बालब्रह्मचारी द्वारा पद्मावती की

मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है। तीसरे में नागनंदि, (दो) पनंदि सिद्धात भट्टारक तथा शीलबे, आळुक एवं आचबे के नाम मिलते हैं।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० बी १५६, १५८-९

१३

लोकापुर (बेळगांव, मैसूर)

९वीं शताब्दी, कन्नड

इस लेख मे राजा कृष्ण के साले के रूप में लोकटे नामक सामन्त का वर्णन है। यह तैलकब्बे का पुत्र था। धोर, दोण्ड तथा बंक इस के बन्धु थे। बनवासि १२००० प्रदेश पर शासन करते हुए इस ने लोकपुर नगर बसाया तथा उसे हरि, हर, जिन और बुद्ध के मंदिरो से सुशोभित किया। इस ने लोकसमुद्र तालाब भी खुदवाया।

क० रि० इ० १९४२-४३, शि० क्र० ११

१४

वर्जीरखेड ताम्रपत्र (प्रथम) (नासिक, महाराष्ट्र)

शकवर्ष ८३६ = सन् ९१५, नागरी-संस्कृत

प्रथम पत्र

१ (स्वस्ति चिह्न) श्रिय. पदक्षिरयमशेषगोव(च)रत्नयप्रमाणप्रतिषिद्ध-
दुष्पथम् [।] जनस्य मव्यत्वसमाहितात्मनो जयत्यनुग्राहि जि-

२ नेन्द्रशासनम् ॥ [१] श्रीमत्परमगम्भीरस्याद्वादामोघलाञ्छनम्।
जीयात् त्रैलोक्यनाथस्य शासनं जिनशासनम् ॥ [२] अ-

३ स्त्यद्यापि निशामुखैकतिलको राजेति नामोज्वलम्
वि (बि) भ्राणो मृदुभि करैर्जगदिदं यो राजते रञ्जयन् [।] यस्यै-

४ कापि कला कलङ्करहिता गङ्गेव तुङ्गे जटाजूटे धूर्जटिना धृतामृतमयी सोमः स किं वर्ण्यते ॥ [३] वंशे तस्य पुरू-

५ रवःप्रभृतिभिर्भूपै कृतालंकृतावन्व.सारतयोन्नतिं गतवति प्राप्ते च वृद्धिं क्रमात् [।] तुङ्गानामपि भूभृतामु-

६ परिगे जातो यदुर्भूपतिः य. कृत्वा कुलमात्मनामविदितं पूर्वान् विजिग्ये नृपान् [॥४] तस्मिन् विस्मयकारिचारुचरि-

७ ते तस्यान्वये संभवम् मत्वा श्लाघ्यतमं पितामहमुखैरभ्यर्थितो नाकिभिः [।] कल्पान्तेपि निजोदरान्तरदरीविश्रा-

८ न्तसप्तार्ण्णवश्चक्रे जन्म हरिर्जितामररिपुः साक्षात् स्वयं श्रीपतिः ॥ [५] इत्थं हरे प्रसरति प्रथि

९ ते पृथिव्यामव्याकुलं वरकुले कलितप्रताप· [।] निर्मूलिताहितमहीपतिभूरिदुर्गं पृथ्वीपति.

१० पृथुममोजनि दन्तिदुर्गं.। [।६] जेतुं तस्मिन् प्रयाते त्रिदिवमिव ततः कृष्णराजो नरेन्द्र· तस्यैवा-

११ सीत् पितृव्य समजनि तनयस्तस्य गोविन्दराजो [।] राजा तस्यानुजोभूत्त्रिरुपमनृपतिः श्रीजगत्तुङ्गदेव· ॥

१२ सूनुस्तस्यावनीशो भवदवनिपतिस्तत्सुतोमोघवर्षः [॥७] तस्मादिन्दुकरावदातयशसश्चालुक्यकालानलात् ले-

१३ भे जन्म हिमांशुवंशतिलक श्रीकृष्णराजो नृपः ॥ राज्ञी तस्य च चेदिराजतनया च्छत्रत्रयाधीश्वरा जाता भूमि-

१४ पतेर्व्वं (बं) भूव च जगत्तुङ्गस्तयोरात्मज· ॥ [८] यस्याद्यापि प्रचण्डासिपातविश्लिष्टविग्रहा· [।] हतशेषा विमुंचन्ति गूर्ज-।

१५ रा न भयज्वरम् ॥०॥ (९॥) आलोड्य (बा)हुसहस्रसेतुविहतव्यावृत्तरेवाजल· क्षोणीशो दशकण्ठदर्प्पदलन. ख्यातः

१६ सहस्रार्जुन ॥ वंशे तत्र च हैहयैकतिलकश्चेदीश्वर कोक्कलो जात-स्तस्य सुतश्च शंकरगण शकाकरो विद्विषां [॥१०]

१७ चालुक्यान्वयमण्डनस्य नृपतेः श्रीसिंहुकस्यात्मजो राजासीदरयम्म इत्यनुपमस्तस्यात्मजायामभूत् ॥

द्वितीय पत्र पहली ओर

१८ लक्ष्मीः क्षीरमहार्ण्णवादिव सुता लक्ष्मीस्तत शंकुकात् देवी सा च पराक्रमोर्ज्जितजगत्तुङ्गस्य कान्ताभवत् ॥ [११] तस्या-

१९ स्तस्मात् तनूजो मदन इव हरे[:] स्कन्दवच्चन्द्रमौलेरिन्दुः क्षीराम्बुराशेरिव विमलयशोराशिशुक्लीकृताश. [।] धातुः सौ-

२० न्दर्यसृष्टिव्यतिकरजनितानूनविज्ञानसेतु पृथ्व्या· पुण्यातिरेकै. सुकृत-निधिरभूदिन्द्रराजो नरेन्द्रः ॥ [१२] वे-

२१ धा विज्ञानदर्प्पं विबु (बु) धपतिरपि स्वाधिपत्यैकदर्प्पं, भूमाराधार-दर्प्पं फणिपतिरधिकं शत्रव शौर्यदर्प्पं-

२२ दर्पो रूपदर्प्पं भुवि सममुचं यं विलक्षाः समक्षं दृष्ट्वा दृष्टान्त-कल्पं सकलगुणगणस्यैकमेवावनीशम् ॥ [१३]

२३ न सर्वगुणसन्दोहमेकस्थं कुरुते विधि [।] यस्मिन्मयेति निर्मृष्टस्तेन दोषश्चिराद्यम् ॥ [१४] समर्प्पितकराम्भोधि-

२४ वेलामालावलम्बि (म्बि) नी । यस्मिन्नस्तान्यभूपाला स्वयं वृतवती मही ॥ [१५] तेजो वीक्षितुमक्षमा क्षणमपि स्वैरे-

२५ व दोषैर्मुहुर्भ्रान्ता. सन्ततमक्रमेण सहसा संगम्य सर्व्वेप्यमी । व्यालो-लाश्चलपक्षपातवि-

२६ कला दीपप्रतापानले दायादा. स्वयमेव यस्य पतिता दीपे पतंगा इव ॥ [१६] आक्रान्तं सम-

२७ मेव शस्त्रुशिरसा येन स्वसिंहासनम् भू (भ्रू) भंगेन सहैव भंगम-
परे नीता परं विद्विषः [।] तेषां-

२८ राज्यमपि क्षणाच्चलमनोराज्यावशेपं (षं) कृतं राज्ये कल्पलतेव
कामफलदा यस्याभवन्मेदिनी ।। [१७] भूभारोद्व-

२९ हने जितः फणिपति. शक्रः श्रिया निर्जित. कीर्त्ति क्रान्तदिगन्तरा
मलिनिता येनाखिलक्ष्माभृताम् [।] त्रैलो-

३० क्येपि न विद्यतेस्य सदृशो राजेति यस्योच्चकैराभाति प्रकटीकृतं
यश इव श्वेतातपत्रत्रयम् ।। [१८] निर्भिन्नं नर-

३१ सिहता गतवता वक्षोमुना विद्विषाम् देवोयं विततस्वचक्रदलितारा-
तिश्रियाप्याश्रित. [।] तत्सेवेहममुं ध्वजा-

३२ प्रनिलयो राजानमित्याश्रितो रागादंचितकांचनोज्वलतनुस्यं वैनतेय
[ ] स्वयम् ।। [१९] दानं मद्गगज. सृजन्न-

३३ पि रुषा कृष्णं करोत्याननं सद्वृक्षोपि फलप्रद. स्वसमये वर्षन् घनो
गर्जति [।] न क्रोधोद्वहनं न कालह-

द्वितीय पत्र . दूसरी ओर

३४ रणं नोत्सेकतो गर्जितं दानं यस्य तथाप्यनूनमभवद्राज्याभिषे-
कोत्सवे ।। [२०] देवो दानितरा स निर्जितव (ब) लिः-

३५ श्रीकीर्त्तिनारायण जित्वा वारिधिमेखलां वसुमतीमेकाधिपः पालयन्
देवमा (ब्रा) ह्मणभोगजातम-

३६ खिलं कृत्रा (त्वा) नमस्य (स्यं) फलं सर्वेषामपि भूभुजां स्वयम-
भूद्देवो नमस्यश्चिरम् ।। [२१] यश्च विनयविनतानेक-

३७ भूपालमौलिमालालालितचरणारविन्दयुगल. सौन्दर्यशौर्यचातुर्यौदा-
र्यधैर्यगाम्भीर्यवीर्यादि-

३८ भिरखिलजनाश्चर्यकारिभिरहितव (ब)हुनृपैश्वर्यहारिभिर्म्महागुणैरुपा-
र्जितानवद्यविद्योतमानविवि-

३९ धनामधेय[.] स्वराज्यलीलाविनिर्जितशतमखः श्रीगेयचतुर्मुख॰
गोदानभूमिदानकनकदानाद्यनेकानूनदा-

४० नपरायण श्रीकीर्तिनारायण॰ संत्रासितोद्वृत्तशत्रुवरपुरोल्लासितसि-
तातपत्र॰ श्रीमनुजत्रिनेत्र॰ । स्वकी-

४१ योदयविकासिताशेषविनतजनवदनपुण्डरीकषण्डः श्रीराजमार्तण्ड॰
समुत्खातसु-

४२ भगमानिनीमहाभिमानसौभाग्यदर्प्प॰ श्रीरट्टकन्दर्प्पः पराक्रमाक्रान्त-
समस्तपार्थिवो-

४३ त्तुङ्गः श्रीविक्रमतुङ्ग॰ सममवत(न्) [।।] स च परमभट्टारकमहा-
राजाधिराजपरमेश्वरश्रीमदकालवर्ष-

४४ देवपादानुध्यो (ध्या)तपरमभट्टारकमहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमन्नि -
रुपमवर्षदेवपृथ्वीवल्लभ श्रीवल्लभनरेन्द्रदेवः

४५ कुशली सर्व्वानेव यथा संव (ब) ध्यमानकां(कान्) राष्ट्रपतिविषय-
पतिग्रामकूटयुक्तकनियुक्तकाधिकारिकमहत्तरादीं (दीन्) स-

४६ मादिशत्यस्तु व॰ संविदितं यथा मान्यखेटराजधानीस्थिरतरावस्था-
नेन पट्टव(ब)न्धोत्सवसंपादनाय समा-

४७ नन्दितकुरुन्दकमुपागतेन मया राज्याभिषेकसमये मातापित्रोरात्म-
नश्चैहिकामुत्रिक पुण्ययशोभि-

४८ वृद्धये पूर्व्वलुप्तानपि देवभोगाग्रहारान् पालयता तथापराण्यप्येक-
विंशतिलक्षद्रव्योत्पत्तिमहितानि दे-

४९ वभोगग्रामाणां षट्शतानि पंचाशद्ग्रामाधिकानि नमस्यानि प्रयच्छता
शकनृपकालातीतसंवत्सरशतेष्व-

५० ष्टासु षट्त्रिंशदुत्तरेषु युवसंवत्सरा-

तीसरा पत्र

५१ न्तर्गतफाल्गुनशुद्धसप्तम्यां शुक्रवारे मृगशिरसि नक्षत्रे प्रभूतोज्वल-
कनकराशिपरिपूरितं तुलापुरुष-

५२ मारुह्य तस्मादनुत्तरता प्रथमोदकातिसर्गेण व (ब)लिचरुसत्रतपो-
धनसंतर्प्पणार्थं देवगुरुपूजार्थं ख-

५३ ण्डस्फुटितसंपादनार्थं च चन्दनापुरिपत्तनाभ्यन्तरे अमोघवसतये
सोद्रङ्गौ सपरिकरौ सभूतोपात्त-

५४ प्रत्ययौ सधान्यहिरण्यादेयौ दशदोषदण्डापराधसहितौ अचाटभट-
प्रवेशौ सर्व्वराजकीयानामहस्त-

५५ प्रक्षेपणीयौ समस्तोत्पत्तिसहितो (ता)वाचन्द्रार्कार्ण्णवसरित्पर्व्वत-
समकालीनौ द्वौ ग्रामौ नमस्यौ दत्तौ ॥

५६ तत्र तावत्प्रथम. पाडलावद्दचतुरा (र) श्री (शी) त्यन्तर्गतमालदह-
ग्राम तस्मात्पूर्व्व. [चिं] चवल्लीग्रामः दक्षिणा गिरि-

५७ पर्ण्णा नदी। पश्चिमा स (सा) एव गिरिपर्ण्णा नदी। उत्तरः
माहुलिग्रामः ॥ तथा द्वितीय सीहपुरसमीपे पारि-

५८ यालग्राम. ॥ तस्मात्पूर्व्वः निम्व (म्ब) ग्राम. दक्षिणः जन्नपिप्पल-
ग्रामः पश्चिमा मणियाडा-

५९ नाम नदी। उत्तरः महावल्लिनामग्राम [॥] एवं यथावस्थि (स्थि)
तचतुराघाटोपलक्षितग्राम-

६० द्वयसहिता पूर्व्वमर्यादया भुक्तभुज्यमाना यथावस्थितचतुराघाटो-
पलक्षिता

६१ सा वसतिर्द्विदिग्भवविशेषवीरगणची(वी)र्न्नायान्वयलोकभद्र -
शिष्याय वर्द्धमानगुरवे समर्पिता ॥

६२ अयं चास्मद्धर्म्मदाय समागामिभिर्नृपतिभिरस्मद्वंश्यैरन्यैश्चानु-
मन्तव्य· ॥ यश्चाज्ञानतिमिरपटला-

६३ वृतमतिराच्छिन्द्या (द्या) दाच्छिद्यमान वा कदाचिदनुमोदते स
पंचभिर्महापातकैरुपपातकैश्च लिप्यते ॥ उ-

६४ क्तं च भगवता वेदव्यासेन ॥ षष्टिं वर्षसहस्राणि स्वर्गे वसति
भूमिद· [।] आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नर-

६५ के वसेत ॥ [२२] स्वदत्तां परदत्तां वा यत्नाद्रक्ष्य (क्ष) नराधिप ।
महीम्महीमतां श्रेष्ठ दानाच्छ्रेयोनुपालनम् ॥ [२३] सामा-

६६ न्योयं धर्म्मसेतुर्न्नृपाणां काले काले पालनीयो भवद्भि [।] सर्व्वा-
नेतां (तान्) भाविन[] पार्थिवेन्द्रा (न्द्रान्) भूयो भूयो याचते

६७ रामभद्रः ॥ [२४] राजशेखरकृता प्रशस्तिरियम् ॥०॥श्री॥

उपर्युक्त ताम्रपत्र वजीरखेड के किसान श्री० नारायणराव मोतीराम माली को खेत जोतते समय मिले थे। इन का प्रकाशन डॉ० वि० भि० कोलते द्वारा सन्मति मासिक (बाहुबली, कोल्हापुर) के नवम्बर-दिसम्बर १९६७ के अक मे किया गया है।[1] उन के द्वारा दिया गया विवरण इस प्रकार है—१४″ × १५″ आकार के ये तीन पत्र ३ इच व्यास की गोल सलाई से एकत्रित रखे गये थे। सलाई के ऊपर मुद्रा मे कमलासन पर गरुड पख फैलाये हुए तथा पजो मे सर्प लिये हुए अंकित है, गरुड के ऊपर दाहिनी ओर गणपति तथा बायी ओर दुर्गा की आकृतियाँ है। गणपति के नीचे चामर व दीप तथा दुर्गा के नीचे चामर व स्वस्तिक अंकित है।

१ इन ताम्रपत्रों पर एक लेख डॉ० ज्योतिप्रसाद जैन, लखनऊ, ने जैन सन्देश (शोधांक २४) में प्रकाशित किया है।

गरुड के सिर पर सूर्य व चन्द्र के प्रतीक दो गोल हैं। गरुड के नीचे श्रीमन्नित्यवर्षदेवस्य यह शब्द अंकित है। नित्यवर्ष दानदाता सम्राट् इन्द्रराज (तृतीय) का उपनाम था। लेख के प्रारम्भ मे दन्तिदुर्ग, कृष्णराज, गोविन्दराज, निरुपम (जो अन्यत्र ध्रुवराज के नाम से प्रसिद्ध है), जगत्तुङ्ग (गोविन्द तृतीय के नाम से अन्यत्र उल्लिखित), अमोघवर्ष तथा कृष्णराज, इन राष्ट्रकूट राजाओ का संक्षिप्त उल्लेख है। कृष्णराज (द्वितीय) की पत्नी चेदि कुल की राजकन्या थी। इन दोनो के पुत्र जगत्तुङ्ग हुए जिन की पत्नी लक्ष्मी हैहय कुल के राजा कोक्कल के पुत्र शंकरगण की कन्या थी। लक्ष्मी की माता चालुक्य कुल के सिंहुक राजा के पुत्र अरयम्म की कन्या थी (वेमुलवाड के चालुक्य राजा नरसिंह व अरिकेसरी के ही ये नामान्तर प्रतीत होते है)। जगत्तुङ्ग व लक्ष्मी के पुत्र इन्द्र (तृतीय) हुए जो कृष्णराज के बाद राष्ट्रकूट साम्राज्य के स्वामी हुए (क्यो कि जगत्तुङ्ग कृष्णराज के पहले ही दिवगत हुए थे)। इन्होने राज्याभिषेक के बाद पट्टबन्ध उत्सव के लिए कुरुन्दक (कोल्हापुर जिले का कुरुन्दवाड अथवा परभणी जिले का कुरुन्दा) नगर मे जा कर सुवर्णतुलादान के साथ इक्कीस लाख द्रम्म आय वाले ६५० ग्राम दान दिये। इस समारोह की तिथि फाल्गुन शु० ७, शुक्रवार, मृगशिर नक्षत्र, शक ८३६, युव सवत्सर (२८ फरवरी सन् ९१५) इस प्रकार बतायी है। प्रस्तुत ताम्रपत्र के अनुसार द्रविड सघ के विशेष वीरगण के वीर्णाय्य अन्वय के लोकभद्र के शिष्य वर्धमान गुरु को चन्दनापुरी पत्तन (वर्तमान चन्दनपुरी, जि० नासिक) की अमोघवसति के लिए दो ग्राम दान मिले थे—पाडलावद्द ८४ विभाग का मालदह (वर्तमान मालधे जि० नासिक) तथा सीहपुर के पास का पारियाल (वर्तमान पारळ, जि० औरगाबाद)। अमोघवसति का निर्माण सम्भवत सम्राट् अमोघवर्ष की प्रेरणा से हुआ था। इस प्रशस्ति के लेखक का नाम अन्त में राजशेखर बताया है जो सम्भवतः कर्पूरमजरी आदि के रचयिता राजशेखर ही थे।

१५

वजीरखेड ताम्रपत्र (द्वितीय) (जि० नासिक, महाराष्ट्र)

शक ८३६ = सन् ९१५, नागरी-संस्कृत

इन ताम्रपत्रो के पहले दो पत्रो मे वही पाठ है जो इस के पूर्व के लेख में पंक्ति ५२ तक दिया है, यहाँ वह सब पाठ ५१ पंक्तियो में पूरा हो गया है। आगे जो भिन्न पाठ है वह इस प्रकार है—

तीसरा पत्र

५२ वडनेरपत्तने उरिअम्मवसतये सोद्रङ्गा· सपरिकराः सभूतोपात्तप्रत्ययाः सधान्यहिरण्यादेयाः दशदोष-

५३ दण्डापराधसहिता. सर्व्वराजकीयानामहस्तप्रक्षेपणीया. समस्तोत्पत्ति॰ सहिता आचन्द्रार्कार्ण्णवसरित्पर्व्वत-

५४ समकालीनाः षट् ग्रामा नमस्या दत्ता ॥ तत्र तावत्प्रथम. रंकाण-चतुर्विङ्श (विंश) त्यन्तर्गतरुद्दाणग्राम तस्मात्पूर्व्व रुद्रगि-

५५ रिपाद. दक्षिण· स एव रुद्रगिरिः पश्चिम वारिवाहलाग्राम. उत्तरा मोसिनी नदी ॥ तथा द्वितीय· छट्टियानद्वास्त्रि-

५६ शान्तर्गतघसउरग्राम तस्मात् पूर्व अन्तरवल्ली ग्राम. दक्षिणा गिरिपर्ण्णी नदी। पश्चिमः फेंचग्राम उत्तर तल-

५७ वाडग्राम ॥ तथा तृतीय रंकाणचतुर्विंशत्यन्तर्गततुंगोणीग्राम ॥ तस्मात् पूर्व्व दशमोड्यलि ग्राम दक्षिणा

५८ तुंगभद्रा नदी। पश्चिम साविणवाडग्राम उत्तर. कतरवल्लि-ग्राम ॥ तथा चतुर्थ. वटनगरविषयान्तर्गत-

५९ अजलोणी ग्राम । तस्मात् पूर्व्व नीलग्राम दक्षिणः तलवाडग्रामः पश्चिमः डोङ्गरग्राम -

६० उत्तरा मोसिवी नदी ।। तथा पंचमः रुद्राणद्वादशान्तर्गतचंदुहाणग्रामः तस्मात् पूर्व्वः अग्ग-

६१ वकियाणग्रामः दक्षिणा अमिघारा नदी । पश्चिमः कन्हैनाणग्रामः उत्तरः बड्डारग्रामः ॥

६२ तथा षष्ठः उद्धूलडकचतुर्व्विंशत्यन्तर्गतदिवारग्रामः ।। तस्मात् पूर्व्वः पिप्पलवद्दग्राम. दक्षिण: सीहग्रा-

६३ मः पश्चि [श्चि] मः वडालीसग्रा उत्तरतः मोराग्रामः ।। एवं यवा [था] वस्थितचतुराघाटोपलक्षितग्रामषट्कसहिता

६४ पूर्व्वमर्यादया भुक्तभुज्यमाना यथावस्थितचतुराघाटोपलक्षिता सा वसतिर्द्रविडसंघविशेषवीर-

६५ गणवीर्णाद्यान्वयपर्यङ्कशिष्याय वर्द्धमानगुरवे समर्पिता ।। अयं चास्मद्धर्म्मदायः समागामिभिर्नृपति-

६६ तिभिरस्मद्व [द्वं] श्यै [श्यै] रन्यैश्चानुमन्तव्यः ।। यश्चाज्ञानतिमिर-पटलावृतमतिराच्छिन्द्याच्छिद्यमानं वा कदा-

६७ चिदनुमा [मो] दते स पचभिर्म्महापातकैरुपपातकैश्च लिप्यते ।। उक्तं च भगवता व्यासेन । षष्टिं वर्षसहस्रा-

६८ णि स्वर्गे वसति भूमिदः [।] आच्छेत्ता चानुमन्ता च तान्येव नरके वसेत् ।। [२२] अत्रैव रामश्लोकार्थं ।। राजशेखरक[कृ]ता प्रशस्तिरियं ।।

इन ताम्रपत्रों मे दानदाता इन्द्रराज (तृतीय) की प्रशस्ति पूर्वोल्लिखित प्रथम ताम्रपत्र के अनुसार ही है । द्रविडसंघ-विशेष वीरगण-वीर्णाद्य अन्वय के वर्धमान गुरु—जिन्हे ये ताम्रपत्र दिये गये थे वे—भी संभवतः पूर्वोक्त लेख में वर्णित वर्धमान गुरु ही हैं यद्यपि यहाँ उन के गुरु का नाम नही दिया है । इन्हें रुद्राण (वर्तमान उन्राण जि० नासिक), वन्नउर (वर्तमान वानरी जि० नासिक), तुंगोणी (वर्तमान तुंगण जि० नासिक),

अज्जलोणो (वर्तमान स्थान अज्ञात), चंदुहाण (वर्तमान चौंधाणे जि० नासिक), तथा दिवार (वर्तमान देवरगाँव जि० नासिक) ये छह गाँव वडनेर (नासिक ज़िले में यह ग्राम इसी नाम से अभी भी है) की उरिअम्मवसति के लिए दान दिये गये थे। दानतिथि तथा अन्य सब विवरण पूर्वोल्लिखित प्रथम ताम्रपत्रों के अनुसार ही समझना चाहिए।

१६

राजौरगढ (अलवर, राजस्थान)

सं० ९७९ = सन् ९२३, संस्कृत-नागरी

प्रसिद्ध शिल्पकार सर्वदेव द्वारा राज्यपुर में शांतिनाथ मंदिर के निर्माण का इस में वर्णन है। वह पूर्णतल्लक से निकले हुए धर्कट वंश के देद्दुलक का पुत्र तथा आर्भट का पौत्र था। सर्वदेव ने यह कार्य पुलीन्द्र राजा के आग्रह से किया था। राजा सावट का भी उल्लेख है। सर्वदेव का पुत्र वराग था तथा गुरु आचार्य सूरसेन थे। इस प्रशस्ति की रचना सागरनंदि और लोकदेव ने की थी।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी १२८

१७

कादलूर (माडया, मैसूर)

शक ८८४ = सन् ९६२, संस्कृत-कन्नड

चालुक्यान्वयम्मिहवस्मन्नृपतेः पुत्री मता श्रीमती
कल्लब्बा जयदुत्तरंगनृपतेर्देवी महात्युत्तमा।
तत्पुत्रोजनि मारसिंहनृपतिः श्रीसत्यवाक्याधिपः
ख्यात श्रीमरुळस्थिरक्षितिभुजस्तस्यानुजः सांजसं ॥१३॥

विद्विट्क्षत्रियकुंभिकुंभदळनप्रोद्भूतमुक्ताफळ-
श्रीहारप्रविशोभितामकजयश्रीलक्ष्यवक्षस्थळः ।
कन्नानम्रसुरेश्वरस्तुतिवचश्रीमज्जिनेन्द्रक्रम-
श्रीपद्मद्वयमानसो विजयते श्रीगंगचूडामणिः ॥३४॥

दुर्वृत्तक्षत्रपुत्रद्विरदमदभरभ्रंशबालद्विपारिः
क्ष्माचक्राक्रान्तिमाद्यत्कलिकलिलतमोभेदबालांशुमाली ।
कैर्नस्तुत्योदयश्री. प्रतिदिनभुवनानन्दसंवृद्धिबाळ-
श्वेतांशुर्बाळ एव क्षितितळजयिनामग्रणीर्मारसिंहः ॥३५॥

पादांभोरुहभृंगभृत्यभरणव्यापारचिंतामणिः
संग्रासग्रहविह्वलीकृतरिपुक्ष्मापालरक्षामणिः ।
विद्वत्कण्ठविभूषणीकृतगुणप्रोद्भासिमुक्तामणिः
देव. कस्य न वर्णनीयचरित. श्रीगंगचूडामणिः ॥३६॥

स तु सत्यवाक्यकोगुणिवर्मधर्ममहाराजाधिराजपरमेश्वरश्रीमान् मारसिंहदेवः

शैलेन्द्रादिव जाह्नवी जलधरात्सौदामिनीवाम्बुधेः
मुक्तापंक्तिरिव प्रकाशितगुणश्रीमूलसंघान्वयात् ।
दिव्या भासुरवृत्तिरप्रतिहता प्रादुर्बभूवावनौ
सूरस्ता गणवृत्तिरुज्वलधियां दिग्वाससां जन्मभू ॥३७॥

श्रीप्रभाचंद्रयोगीशस्तद्गणाधीश्वर. कृती ।
सर्वशास्त्रमहांभोधिर्विश्रुत: सकलावनौ ॥३८॥

तस्य प्रभाचंद्रमुनीश्वरस्य शिष्यस्तपोमूर्तिरुदारकीर्तिः ।
बभूव भव्याब्जविकासभानुः सतां वरः कल्नेलेदेवनामा ॥३९॥

तस्य शिष्योजनि श्रीमान् रविचन्द्रमुनीश्वरः ।
षट्त्रिंशद्गुणसंयुक्तः शास्त्रवाराशिपारगः ॥४०॥

अपि च श्रीसूरस्तगणः सुदुस्सहतपःशूरैस्तपोराशिभिः
शिष्यैर्लब्धसुधांशुनिर्मलयशोराशिः समुद्भासते ।
मिथ्याज्ञानतमोविभेदनरविर्विद्वत्सभाकौमुदी-
चन्द्रश्रीरविचंद्रपंडित इति ख्यातो यतिग्रामणीः ॥४१॥

तस्य श्रीरविचंद्रपंडितगुरोः शिष्यः सतामग्रणीः
दीनानाथवनीपकव्रजमनःसंतोषसाक्षान्निधिः ।
भव्यांभोरुहषण्डमंडनरविर्जैनागमांभोनिधिः
जातः श्रीरविनंदिदेवमुनिपः सौजन्यजन्मालयः ॥४२॥

तस्याभवन्मुनेः शिष्यस्तपोनुष्ठानतत्परः ।
एळाचार्यो यतिः श्रीमानार्यवर्यः श्रुतांबुधिः ॥४३॥

अपि च

दारिद्र्यातपतप्तदीनजनता संकल्पकल्पद्रुमः
पादांभोरुहभव्यभृंगजनतासंतोषचिंतामणिः ।
एळाचार्यमुनींद्र एष विलसच्चारित्ररत्नाकरः
श्रीमज्जैनमतोदयाचलरविर्विभ्राजते भूतळे ॥४४॥

कोंगलदेशनिवासिनां निरुपमं श्रीकादलूरसंज्ञकं
कल्लब्बारचितस्य जैननिळयस्याभ्यर्चनार्थं कृती ।
एळाचार्यमुनीश्वराय विदुषे ग्राम नमस्यं स्वयं
धारापूर्वमदाज्जितारिनिरपः श्रीमारसिंहो नृपः ॥४५॥

स्वकीयाम्बिकाकल्लब्बाराज्ञीकारितस्य जिनालयस्य सुधाचित्रचित्रादि-पूजार्थं मुनिजनेभ्यश्चतुर्विधदानार्थं च तेनाभिवंद्यमानैर्बालकालचरितैरप्य-खर्वप्रतिपक्षखंडनैकाखडलमहितमहीपतिवाहिनीनिवहगहनदहनहुतवहमत्य-न्तविश्रांतप्रत्यंतनृपसमीपवर्ति समवर्तिनामाजिविजयोद्धुरविरोधिवसुधाधि-राजराज्याग्रग्रासकालसैकराक्षसराजमवार्यगांभीर्यसागरसाम्राज्यपालनैकपा-शपाणिमसिधाराजकमवृद्धबद्धमूलस्तब्धविद्विष्टनृपविषविटपनिर्मूलनानिल -

मनवरतप्रधानविजयधनसंग्रहधनेश्वरमखिलजगद्वर्तिकीर्तिंगंगोद्वहनमहेश्वर-मनुकृष्टाष्टदिक्पाळमशेषराजर्षिमूर्धाभिषिक्तं पितरं सत्यवाक्यभूपति-मनुकुर्वता मारसिंहदेवेन मेल्पाटिशिबिरमधिवसति विजयस्कन्धावारे शकनृपकाळातीतसंवत्सराष्टशतेषु चतुरशीत्यभ्यधिकेषु दुंदुभिसंवत्सरांत-र्गतपौषमासबहुळपक्षनवम्यां मंगळवारस्वातिनक्षत्रगरजकरणधृतियोग-संयोगिनां कन्यालग्ने तत्समयसमाविर्भूतजिनसवनजनितानंदमनुजमुनि-जनसमाजकोळाहळकलकळापूरितदिशायां तत्काळनिराकुलसंचलत्कलि-चंडाळसंपर्कपातकातंकपंकक्षाळनोद्यतजगज्जनमज्जनक्षोभितभूतलप्रतीतगंधो-दकप्रवाहसहितायाम् उत्तरायणसंक्रांत्यां तस्मै एळाचार्यमुनीश्वराय सकळभूपाळमौलिमाळामकरंदरजःपुंजपिंजरितचरणारविंदयुगळाय शिशिर-करनिकरविशदयशोराशिविशदीकृतसकळमहीतळाय जिनाभिषेकगंधजल-धारापुरस्सरं कोंगळदेशांतर्वर्ती कादलूरनामा ग्रामो दत्त· अस्य सीमा (इस के बाद कन्नड में सीमा का विस्तृत विवरण तथा अन्त में दान की रक्षा के लिए शापात्मक श्लोक हैं) ।

इस ताम्रशासन का सक्षिप्त विवरण जै० शि० सं० भाग ४ में दिया है (लेख क्र० ८५) । उस समय मूल पाठ नही मिल सका था । ९ ताम्रपत्रो पर लिखे गये इस लेख का प्रारंभिक गद्यभाग तथा ३२ वें श्लोक तक का पद्यभाग गंग राजाओं की वंशावली का वर्णन करता है जो प्राय: जै० शि० सं० भाग २ के लेख १२२ तथा १४२ के समान है । तदनतर गग राजा बूतुग जयदुत्तरंग की पत्नी कल्लब्बा (जो चालुक्य राजा सिंहवर्मा की कन्या थी) के पुत्र मारसिंह (द्वितीय) का वर्णन है । इन के भाई का नाम मरुळ था । मारसिंह ने उन की माता द्वारा कोंगल देश में निर्मित जिनमंदिर के लिए सूरस्त गण के एळाचार्य को कादलूर ग्राम दान दिया था । उस समय वे मेलपाटि के स्कन्धावार में थे । दान की तिथि पौष वदी ९ मंगलवार शक ८८४ दुंदुभि संवत्सर की उत्तरायण सक्रांति थी । एळाचार्य की गुरुपरम्परा-मूलसंघ-सूरस्तगण के प्रभाचन्द्र

योगीश-कल्नेलेदेव-रविचन्द्र मुनीश्वर-रविनन्दिदेव-एळाचार्यमुनीन्द्र इस प्रकार बताया है।

ए० इ० २६ पृ० ६७-११०

१८

येडरावी (बेलगांव, मैसूर)

शक ९०१ = सन् ९७९, कन्नड

बर्मदेव मन्दिर के आगे चबूतरे मे लगी हुई एक शिला पर यह लेख है। इस मे बताया है कि कनकप्रभ सिद्धान्तदेव के चरण धो कर गाँव के बारह गावुण्डोने एळरामे के देहार के लिए संक्रान्ति के अवसर पर कुछ भूमि पुष्य बदी १३ प्रमादि संवत्सर शक ९०१ को दान दी थी।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० बी ३५६

१९

द्वारहट (अलमोडा, उत्तरप्रदेश)

सं० १०४४ = सन् ९८८, संस्कृत-नागरी

चरणपादुका के पास यह लेख है। इस मे उक्त वर्ष तथा अर्जिका देवश्री की शिष्या अर्जिका ललितश्री का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० सी ३८३

२०

देवगढ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १०५१ = सन् ९९४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर न० ७ मे है। स० १०५१ मे मन्दिर के द्वार के निर्माण का इस मे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ४०५

२१

कटोरिया (राजस्थान)

सं० १०५२ = सन् ९९५, संस्कृत-नागरी

वागट संघ के श्री सुरसेन के उपदेश से सिहैक, यशोराज तथा नोण्णैक इन तीन भाइयों ने एक जिनमूर्ति की स्थापना की ऐसा इस पादपीठ लेख में वर्णन है। यह लेख अजमेर संग्रहालय में रखा है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० बी २३२

२२-२३

बस्तिपुर (मैसूर)

लिपि—१०वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

गाँव के बाहर पहाडी पर एक चट्टान पर यह लेख है। इस में जैन आचार्य पुष्पनन्दि के समाधिमरण का वर्णन है। यहीं के एक अन्य लेख में पुष्पनंदि के साथ पुरिमंडल मुनि का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ८०८-९

२४

बम्बई संग्रहालय (मूलस्थान अज्ञात)

लिपि—१० वीं सदी की, तमिळ

अलुंदूर नाडु के एलुमूर ग्राम के इलाडै अरैयन् तिरुवडि की पत्नी तिरुनगै द्वारा श्रीनामुळूर के मन्दिर में स्थापित जिनमूर्ति का इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० बी ११९

२५

शिंगवरम् (दक्षिण अर्काट, मद्रास)

लिपि—१० वीं सदी की, तमिल

इस में इळैय भटारर् का ३० दिन के उपवास के बाद स्वर्गवास हुआ ऐसा वर्णन है। ग्राम के निकट तिरुनाथर् कुण्रु नामक चट्टान पर यह लेख है।

(मूल तमिल में मुद्रित) सा० इ० इ० १७ पृ० १०४

२६-२७-२८-२९

देवगढ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि—९वीं—१०वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरो में मिले हैं। मन्दिर नं० १४ में एक कायोत्सर्ग मूर्ति के पास श्रीनागसेनाचार्यस्य यह नाम अंकित है। मन्दिर नं० ५ में दूसरा लेख है जो संभवत किसी यात्री का नाम है। मन्दिर नं० ७ में तीसरा लेख है जिस में मन्दिर के द्वार की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१४, ५०१,५०६

यहीं के मन्दिर न० २६ में निम्नलिखित शब्द पाषाणखण्डो पर पढ़े गये हैं—१) अभाणदि पभतसः २) डाव ३) अये ४) वीरचन्द्र ५) केशव-सुत ६) शुर्ज ७) शिवपुर गोविन्द ८) स्य गगाश्रेनाहिता शुभा। इन की लिपि भी १०वी सदी की कही गयी है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० सी ३०८

३०

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० १०६१ = सन् १००४, संस्कृत-नागरी

ज्येष्ठ शु० ८ सं० १०६१ के इस लेख मे वा(ग)ट संघ के धर्मसेन तथा श्राविका महादेवी द्वारा जिनमूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १६५७-५८, शि० क्र० बी ४२१

३१

दिल्ली

सं० १०६१ = सन् १००४, संस्कृत-नागरी

राजा बाजार के जैन मन्दिर की एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस की स्थापना सं० १०६१ में गटिल के पुत्र भरत ने की ऐसा लेख में कहा है।

रि० इ० ए० १६६० ६१, शि० क्र० बी २२३

३२-३३

भोजपुर (रायसेन, मध्यप्रदेश)

११वीं शताब्दी-पूर्वार्ध, संस्कृत-नागरी

१. ····रे चंद्रार्धमौलिरसमः सम·········
मद्भुतकी·········राजपरमेश्वरभोजदेवः ॥

२. ····रसा(ग)रनंदिनामा । स ने(मि)चं(द्रो) विदधे प्रतिष्ठां
सुदुर्लभः सा(शां)तिजिनस्य भू— ॥

[यह लेख राजा भोजदेव के राज्य मे लिखा गया था। सागरनन्दि तथा नेमिचन्द्र द्वारा शान्तिनाथ मूर्ति की स्थापना का इस मे वर्णन है। लेख मूर्ति के पादपीठ पर है।]

रि० इ० ए० १९५९-६० क्र० बी २५३, ए० इ० ३५ पृ० १८५-६

यही पर एक अन्य लेख मे इसी समय की लिपि मे श्रीा(मृ)दंक ऐसा नाम अंकित है जो सभवत किसी यात्रिक का है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी २५६

आ ·४

बयाना (भरतपुर, राजस्थान)

सं० १०७७ = सन् १०२०, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथ मूर्तिके पादपीठ पर यह लेख है। तिथि फाल्गुन शु० २ सं० १०७७ के अतिरिक्त अन्य विवरण प्राप्त नही है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० बी० २३३

३५

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

शक ९६३ = सन् १०४२, संस्कृत-कन्नड

किले मे एक स्तम्भ पर यह लेख है। नन्दिसिद्धान्तदेव के शिष्य नागनंदि भट्टारक के शिष्य गडविमुक्त भट्टारक का बहुधान्य नगर मे माघ शु० १० शक ९६३ वृष संवत्सर के दिन स्वर्गवास हुआ था ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी ११३

३६

कुयिबाळ (धारवाड, मैसूर)

शक ९८७ = सन् १०४५, कन्नड

कुय्यबाळ की बसदि के लिए कुछ गावुण्डो द्वारा गुण (भद्र) सिद्धान्तिदेव का दिये गये दान का इस लेख में वर्णन है। उन की शिष्या मोनिमति कन्ति का नाम भी दिया है। चालुक्य सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल (सोमेश्वर १) के राज्य का उल्लेख भी है।

(मूल लेख कन्नडमें मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० ३५-३६

३७

बचाना (भरतपुर, राजस्थान)

सं० १११० = सन् १०५३, संस्कृत-नागरी

ऋषभदेव की मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। जाहृ के पुत्र देलूक ने आषाढ, स० १११० में यह मूर्ति स्थापित की थी।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६८ शि० क्र० बी २३४

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६४३ मे भी सभवतः इसी लेखका विवरण है। यद्यपि यहाँ मूर्तिस्थापक का नाम जादु का पुत्र देल्हुक ऐसा पढा गया है, तिथि वही है।

३८

बडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० (११) १३ = सन् १०५७, संस्कृत-नागरी

यह लेख जिनमन्दिर के द्वार पर है। इस में द्वादसक्क मंडल के आचार्य केवली श्री अभयचन्द्र का नाम तथा उक्त वर्ष अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १६६२

३९

वरंगल (आन्ध्र)

शक ९ (८०) = सन् १०५८, कन्नड

विलम्बि संवत्सर का यह लेख टूटा है। किसी सिद्धांतदेव के शिष्य मुनिसुव्रत का इस में उल्लेख है। यह लेख किले में शंभुनिगुडि के सामने पडा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४ शि० क्र० बी ४४

४०

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

शक ९८९ = सन् १०६७, कन्नड

पेद्दवागु नामक नाले के पास एक स्तम्भ पर यह लेख है। रेवुंडि और नेरिल में राष्ट्रकूट शंकरगंड द्वारा निर्मित बसदियों को जुव्विकुटे और निडंगलूरु में पहले कुछ जमीन दान मिली थी जो बाद मे अन्य लोगो ने छीन ली थी। महासंधिविग्रहि दण्डनायक केसिमय्य तथा रेव्विसेट्टि, अप्पणय्य आदि की प्रार्थना पर रानी ने कार्तिक शु० १३ सोमवार, प्लवंग संवत्सर, शक ९८९ को उक्त जमीन पुन उन बसदियो को सौंपी। उक्त समय चालुक्य सम्राट् त्रैलोक्यमल्ल सपरवाडि से राज्य कर रहे थे तथा कोल्लिपाके ७००० प्रदेश पर महासामन्त मेळरस नियुक्त थे।

रि० इ० ए० १९६१-१९६२, शि० क्र० बी ९३

४१

दड्डल (रायचूर), मैसूर

शक ९९१ = सन् १०६९, कन्नड

१ स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्रीपृथ्वीवल्लभ महाराजा-
२ धिराजपरमेश्वरं परमभट्टारकं सत्याश्रय-
३ कुळतिळकं चालुक्याभरणं श्रीमद्भुवनैकमल्लदेवर वि-
४ जयराज्यमुत्तरोत्तराभिवृद्धिप्रवर्द्धमानमाचन्द्रार्क्कतारंब-
५ र सलुत्तमिरे तत्पादपद्मोपजीवि समधिगतपंचमहा-
६ शब्द महामंडलेश्वरं अरिदुर्द्धरवरभुजासिभासुर प्र-
७ चंडप्रद्यो[त]दिनकरकुळनंदनं काश्यपगोत्रं कळिकालान्वयं का-
८ वेरीवल्लभं कंबलपरेघोषणं मयूरपिच्छध्वजं सिंहलांछ-(नमो)
९ रेयूर्प्पुरवरेश्वरं परचक्र [धव] ळं मा [कों] ळ-भीमं गोत्रपवित्रं श्री-
१० मन्महामंडलेश्वरं पेडकलुजटाचोळभीममहाराजरु ॥ समधिगतपंच-
११ महाशब्द महासामन्तं विजयलक्ष्मीकांतं माहेष्मतीपुरवरेश्वरं मध्य-
१२ देशाधिपति सहस्रबाहुप्रतापं निजान्वयमाणिक्यनेकवाक्यं चतु-
१३ रचारायणनुपायनारायणं गिरिगोटेमल्लं रिपुहृद-
१४ यसेल्लं विषमहयारूढरेवन्त परबलकृतान्त मंगिय-
१५ मरुळं श्रीमन्महासामन्त मानुवेय मळेयमरसर सकव-
१६ र्षं ९९१ नेय सौम्यसंवत्सरदुत्तरायणसंक्रान्तियतिवनि-
१७ मित्यदिं श्रीयुत्तवमन्तकोलद माकिसेट्टियर पोलपाळल माडि-
१८ सिद गिरिगोटेमल्लजिनालयक्के पोलपाळ पल्लुवण पोल मेरेय-

१९ लु बिट्ट निगर मत्तरारु आ पोहिगेयल् कन्तरिकेयलु निगरं मत्तरा
२० रु कोरविय तेंकवोलदलु बिट्ट निगर मत्तर्प्पसेरडुअन्तु म-
२१ त्त [२] ४ पूर्दोट मत्त १ गाण १ मनेय निवेशन ५
२२ सामान्योयं धर्म्मसेतुर्नृपाणां काले काले पालनीयो
२३ भवद्भि. सर्व्वानेतान् भाविन· पार्थिवेन्द्रान् भूयो भूयो याच-
२४ ते राममद्र ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा यो हरेत वसुंधरां ष-
२५ ष्टि वर्षसहस्राणि विष्टायां जायते क्रिमि ॥

चालुक्य सम्राट् भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर २) के अधीन महामडलेश्वर जटाचोळ भीम महाराज के अधीन महासामन्त मळेयमरस गिरिगोटेमल्ल के राज्य में माकिसेट्टि द्वारा पोन्नपाळु में निर्मित गिरिगोटेमल्ल जिनालय के लिए कुछ भूमि, उद्यान, तेलघानी और घरो के दान का इस लेख में वर्णन है। शक ९९१ सौम्य संवत्सर की उत्तरायणसक्रांति के अवसर पर यह दान दिया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ८९५ ए० इ० ३७ पृ० ११३-११६

४२

कोहिर (मेडक, आन्ध्र)

शक ९९१ = सन् १०७०, कन्नड

चालुक्य सम्राट् भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर २) के राज्यकाल मे पौष शक ९९१ सौम्य संवत्सर मे पडवळ चावुण्डमय्य द्वारा निर्मित बसदि के लिए दान का इस लेख में वर्णन है। मन्दिर निर्माता के गुरु शुभचन्द्र सिद्धान्तदेव थे। प्रादेशिक शासक के रूप में पंचपेर्मानडि का नाम उल्लिखित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ बी ५७

४३

देवगढ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १(१) २६ = सन् १०७०, संस्कृत-नागरी

मन्दिर नं० १९ मे यह लेख है। सं० १(१)२६ से ठकुर सीरुक की पत्नी मोहिनी द्वारा पद्मावती मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। इस के लेखक का नाम गोपाल पण्डित बताया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०४

४४

तडखेल (नादेड, महाराष्ट्र)

शक ९९३ = सन् १०७१, कन्नड

मल्लेश्वर मन्दिर मे पडी हुई एक शिल्पाकित शिला पर यह लेख है। पुष्य ब० ५ शुक्रवार शक ९९३ साधारण सवत्सर, उत्तरायण संक्रान्ति के अवसर पर यह दान की प्रशस्ति लिखी गयी थी। चालुक्य सम्राट् भुवनैकमल्ल (सोमेश्वर २) के राज्यकाल मे वाजिकुल के दण्डनायक कालिमय्य ने निगलक जिनालय को कुछ भूमि दान दी तथा दण्डनायक नागवर्मा ने उस के लिए एक उद्यान व तेलघानी दान दी ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी १९४

४५

तलेखान (रायचूर, मैसूर)

शक ९९४ = सन् १०७२, कन्नड

उपर्युक्त गाँव के पूर्व की ओर २ मील पर एक खेत में यह लेख है। तनकवावि के ऊरोडेय अप्पणय्य द्वारा निर्मित बसदि (जिनमन्दिर) के लिए आषाढ शु० ५ शक ९९४ दुन्दुभि संवत्सर के दिन कुछ भूमि दान

दिये जाने का इस में वर्णन है। तत्कालीन शासक के रूप में चालुक्य वंश के राजा जगदेकमल्ल (जयसिंह द्वितीय) तथा दण्डनायक पोळलमय्य का नाम उल्लिखित है।

रि० इ० ए० १९५८–५९ शि० क्र० बी ७२०

४६

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

शक ९९५ = सन् १०७२, संस्कृत-कन्नड

किले में एक स्तम्भ पर यह लेख है। इस में भाद्रपद कृ० ८ शनिवार शक ९९५ को चन्द्रप्रभाचार्य के स्वर्गवास का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ११४

४७

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११३० = सन् १०७४, संस्कृत-नागरी

फाल्गुन शु० ११ सोमवार सं० ११३० के इस मूर्तिलेखमें भारारि व उस के पिता का नाम अंकित हैं। लेख खण्डित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४२६

४८

बडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० ११३४ = सन् १०७८, संस्कृत-नागरी

यह लेख जिनमन्दिर के द्वार पर है। इस मे उक्त वर्ष तथा आचार्य मन्त्रवादी देवचन्द्र का एवं श्रीवारुदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १९६३-६४

४९-५०

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० ११३५–६ = सन् १०७९–८०, संस्कृत-नागरी

यह लेख यहाँ के मन्दिर नं० २० की एक जिनमूर्ति की स्थापना के विषय में है। इस मे सं० ११३६ मे जसोधर के पुत्र (नाम अस्पष्ट) का उल्लेख है। यही के एक अन्य लेख मे सं० ११३५ मे आर्यिका लवणश्री का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, शि० क्र० सी १८९,१८३

५१

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११३(७) = सन् १०८०, संस्कृत-नागरी

वैशाख शु० ५ सं० ११३(७) के इस मूर्तिलेख मे चन्दन के पुत्र वीर का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४२७

५२

चितलघाट (मेडक, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ६ = सन् १०८१, कन्नड

ग्राम के पूर्व मे एक मील पर पड़ी शिला पर यह लेख है। पुष्य शु० १४ गुरुवार चालुक्य विक्रम वर्ष (६) दुन्दुभि सवत्सर के दिन महासामन्त कद्दरस ने माधवचन्द्र सिद्धांतदेव के चरण धो कर जिनमन्दिर के लिए कुछ दान दिया था ऐसा इस मे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी २१७

५३

अल्लदुर्गम् (मेडक, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ९ = सन् १०८४, कन्नड

आश्वयुज शु० ९ बुधवार, रक्ताक्षी सवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष ९ का यह लेख है। महामण्डलेश्वर आहवमल्ल पेर्मानडि की ओर से कीर्ति-विलास शातिजिनालय में ऋषियो को आहारदान देने के लिए कुछ भूमि आचार्य कमलदेव सिद्धान्ती को दान दी गयी ऐसा इस मे वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज ३ पृ० ४५

५४

कोण्णूर (बेळगांव, मैसूर)

चालुक्य विक्रम वर्ष १२ = सन् १०८७, कन्नड

चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के अन्तर्गत रट्ट वश के सामन्त जयकर्ण के राज्य मे महाप्रभु निधियम गामुड ने मूलसघ के एक जिनमन्दिर को २ मत्तर जमीन, तेलघानी तथा उद्यान दान दिया ऐसा इस लेख मे वर्णन है। पौष कृ० चतुर्थी (या चतुर्दशी), प्रभव सवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष १२ ऐसी इस की तिथि बतायी है।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ४६

५५

पुदूर (महबूबनगर, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष १२ = सन् १०८७, कन्नड

गांव की चावडी (पचायत भवन) के पास पडी शिला पर यह लेख है। चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल कल्याण से राज्य कर रहे थे उस

समय चालुक्य विक्रम वर्ष १२, प्रभव संवत्सर की पुष्य अमावास्या, रविवार, उत्तरायण सक्रान्ति के अवसर पर पुण्डूर के महामण्डलेश्वर जत्तरस ने तिक्कप्प दण्डनायक को पार्श्वदेव की पूजा के लिए भूमि, उद्यान और कुछ अन्य आय के साधनों का दान दिया। इस देवमूर्ति की स्थापना मूलसघ-देशीगण-पुस्तक गच्छ-कोण्डकुन्दान्वय के पद्मनंदि मलधारिदेव ने की थी।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ८२

५६

पुदूर (महबूबनगर, आन्ध्र)

सन् १०८७, कन्नड

पुष्य अमावास्या रविवार प्रभव संवत्सर चालुक्य विक्रम वर्ष २१ (सम्पादक के कथनानुसार यह वर्ष ११ होना चाहिए क्योंकि तिथि-वार की गणना उसी वर्ष मे ठीक पडती है) को चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल जब कल्याण से राज्य कर रहे थे तब महामण्डलेश्वर हल्लवरस ने द्रविड़ संघ के पल्लवजिनालय के लिए कनकसेन भट्टारक को भूमि दान दी ऐसा इस लेख मे वर्णन है।

आन्ध्रप्रदेश आर्कि० सीरीज २२ शि० क्र० ७९

५७

किशनगढ़ (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११५० = सन् १०९४, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। ज्येष्ठ व० १ सं० ११५० इस तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण नही मिलता।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३५

५८

इंगळगी (गुलबर्गा, मैसूर)

चालुक्य विक्रम वर्ष १८ = सन् १०९४, कन्नड

यह लेख चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल तथा रानी जाकल देवी के राज्य के समय फाल्गुन शु० १० सोमवार चालुक्य विक्रम वर्ष १८ श्रीमुख सवत्सर के दिन लिखा गया था। इस मे एक जिनमूर्ति की स्थापना व कुछ दान का वर्णन है। लेख नागार्जुन पण्डित ने लिखा था।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी ४४१

५९

भोजपुर (रायसेन, मध्यप्रदेश)

स० ११५७ = सन् ११००, संस्कृत-नागरी

१ संवत ११५७ (श्री) नरवर्म्मस्वा[सा]म्राज्ये वेम-

२ कान्वय[ये] नेमिचधु[द्र] स[सु]त. रू[श्रे]ष्ठी रामाख्यो नू-

३ णि सुतियः तत्पुत्रचिल्लणाख्येन जि[न]

४ युग्म प्रतिष्ठितं

[राजा नरवर्मा के राज्य मे सं० ११५७ में वेमक कुल के नेमिचन्द्र के पुत्र राम श्रेष्ठी के पुत्र चिल्लण ने दो जिनमूर्तियाँ स्थापित की। यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है।]

रि० इ० ए० १९५९-६० क्र० बी २५२, ए० इ० ३५ पृ० १८६

६०

बीदर (मैसूर)

लिपि—११वी सदी की, कन्नड

यह अधूरा लेख संग्रहालय मे रखा है। जिनशासन की प्रशंसा से इस का प्रारम्भ होता है। यम-नियम आदि शब्दो से प्रारम्भ होने वाली एक प्रशस्ति बाद मे है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६१ शि० क्र० बी १८३

६१-६२-६३

हनुमकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि—११वी सदी की, कन्नड-तेलुगु

यहाँ पहाडी पर पद्माक्षी देवी के मन्दिर के पास तीन लेख खुदे है। इन मे एक बहुत अस्पष्ट है। दूसरे मे निम्नलिखित नाम हैं—

श्रीप्रभाचद्रदेवर माधवशेट्टि

तीसरे लेख में कन्नबोय यह नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९, शि० क्र० बी ११९-२१

६४

पटना संग्रहालय (बिहार)

लिपि—११वीं सदी की, संस्कृत—नागरी

बिहार शरीफ से प्राप्त स्तम्भ पर यह लेख है। इस में किसी जैन आचार्य की प्रशंसा है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ११०

६५

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

लिपि–११वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

किले में एक स्तम्भ पर यह लेख है। देवेन्द्र सिद्धान्तमुनीश्वर के शिष्य शुभनंदि के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ११२

६६–६७

हळेबीड (हासन, मैसूर)

लिपि–११वीं सदी की, कन्नड

केदारेश्वर मन्दिर में पड़ी हुई शिला पर यह लेख है। मूलसंघ-देशिगण—पुस्तक गच्छ—कोण्डकुन्दान्वय के नेमिचन्द्र भट्टारक के शिष्य मल्लिसेट्टि के पुत्र हरिसदेव और तिप्पण्ण ने इस पार्श्वमूर्ति की स्थापना की थी। यहीं के एक और खण्डित लेख में पुणिसजिनालय का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६३–६४ शि० क्र० बी ३६१-२

६८

मद्रास (मूलस्थान अज्ञात)

लिपि—११वीं सदी की, तमिळ

महावीर मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। तिरुक्कोविलूर के किसी सज्जन (नाम अस्पष्ट) ने यह मूर्ति स्थापित की थी।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी २९६

६९–७०

धर्मपुरी (बीड, महाराष्ट्र)

लिपि—११वीं सदी की, कन्नड

(१) यह लेख खण्डित है। इस मे यापनीय संघ का तथा प्रशस्ति लेखक के रूप मे ईश्वरभट्ट का उल्लेख है। (२) इसमे यापनीय संघ-वदियूर गण के महावीर पण्डित को पोट्टलकेरे पंचपट्टण की ओर से कुछ करों की आय अर्पित की गयी थी। ये पण्डित धर्मपुर की (बेसकि) सेट्टिय बसदि के प्रमुख थे।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी ४६०-१

७१

ततिकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि–११ वी सदी की, संस्कृत-कन्नड

इस अधूरे लेख में चन्द्रसूरि, नयभद्रसूरि तथा मुनिसुव्रत का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४, शि० क्र० बी ४१

७२

बोधन (निजामाबाद, आन्ध्र)

११वीं सदी का अन्तिम या १२वीं सदी का प्रारम्भिक भाग, संस्कृत–कन्नड

किले मे रखे हुए एक स्तम्भ पर यह लेख है। इस मे चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल के राज्य-काल में एक जिन-मन्दिर को मिले कुछ दानो का वर्णन है। श्रेष्ठिकुल के कुछ लोगो तथा नालिकाबिका के नाम भी मिलते है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी ११५

७३

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

लिपि–११वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर मे एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में क्षेत्रपाल वारेन्द्र का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० सी १७४०

७४-७५-७६-७७-७८

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

लिपि–११वीं-१२वी सदी की, संस्कृत-नागरी

ये पाँच लेख हैं। प्रथम तीन जिनमूर्तियो के पादपीठो पर हैं। एक मे आम्रनन्दि भट्टारक तथा कालसेन-जिनालय के नाम हैं। दूसरे में आम्रनन्दि तथा कुलन्धर के पुत्र जिनदास के घरवास-जिनालय के नाम हैं। तीसरे मे दुर्लभनन्दि के शिष्य रविचन्द्र के शिष्य सर्वनन्दि आचार्य का नाम है। शेष दो लेख जिनमन्दिर के द्वार पर हैं। इन मे भट्टपुत्र श्रीगोल्लुण तथा भट्टपुत्र देवशर्मा के नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६३-६४, शि० क्र० सी १९४०, १९४४-४५, १९४७-४८

७९

तंटोली (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११६१ = सन् ११०४, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। फाल्गुन शु० ३ शुक्रवार सं० ११६१ यह इस मूर्ति की स्थापना की तिथि बतायी है तथा श्रेष्ठि धमानाक के लिए बोधि ने यह स्थापित की ऐसा कहा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४१२

८०

हैदराबाद संग्रहालय (मूलस्थान संभवतः गोब्बूर, आन्ध्र)

चालुक्य वि० वर्ष ३३ = सन् ११०९, कन्नड

चालुक्य सम्राट् त्रिभुवनमल्ल जयन्तीपुर से राज्य कर रहे थे उस समय हिरिय गोब्बूरु के अग्रहार के कम्मटकारो (टकसाल के कर्मचारियों) द्वारा ब्रह्मजिनालय मे चैत्र पवित्र पूजा के लिए कुछ धन दान दिया गया था। तिथि माघ पौर्णिमा, सोमवार, सर्वधारी संवत्सर, चालुक्य वि० वर्ष ३३ बतायी है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी २१

८१

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

चालुक्य विक्रम वर्ष ५० = सन् ११२५, संस्कृत–कन्नड

सोमेश्वर मन्दिर के पीछे तालाब मे एक स्तम्भ पर यह लेख है। चैत्र व० ३ सोमवार, विश्वावसु सवत्सर, चालुक्य विक्रम वर्ष ५० यह इस की तिथि है। दण्डनायक महाप्रधान मनेवेर्गडे सायिपय्य के निवेदन पर राजकुमार सोमेश्वर ने अम्बरतिलक की अम्बिकादेवी के लिए पाणुपुर ग्राम दान दिया था। इस दान मे से वह जमीन मुक्त रखी गयी थी जो पोळलु के निकट की अक्कबसदि को पहले दी गयी थी। दान की व्यवस्था देविय पेर्गडे केशिराज को सौपी गयी थी। काणूरगण—मेष-पाषाण गच्छके जैन आचार्यों का तथा अम्बिका मन्दिर मे केशिराज द्वारा मानस्तम्भ व मकरतोरण के निर्माण का भी इस लेख मे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ९२

मूल कन्नड में आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज न० ३ में प्रकाशित।

८२-८३-८४-८५

गोर्टे (बीदर, मैसूर)

भूलोकवर्ष ५ = सन् ११३०, कन्नड

महादेवप्प कनकटे के खेत मे एक स्तम्भ पर यह लेख है। श्रावण व० ७ सोमवार, साधारण सवत्सर, भूलोकवर्ष ५ के दिन त्रिभुवनसेन सिद्धान्त-देव के समाधिमरण का इस मे वर्णन है। यही के एक अन्य स्तम्भ पर इसी समय की लिपि मे एक जैन आचार्य, सिगिसेट्टि तथा वर्धमान के नाम अकित है। इसी गाँव के महादेव मन्दिर मे लगी हुई एक शिला पर इसी समय की लिपि मे त्रिभुवनसेन सिद्धान्तदेव के शिष्य हम्मिकब्बे के पुत्र चिन्निसेट्टि और बाचण द्वारा एक देवी मूर्ति की स्थापना का वर्णन है। इसी मन्दिर की एक अन्य शिला पर मुनिसुव्रत सिद्धान्तदेव के शिष्य बसविसेट्टि और लोकणब्बे के पुत्र रेवसेट्टि और जिन्नण द्वारा पद्मावती मूर्ति की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ७६७-८ तथा ७६२-३

८६

वरंगल (आन्ध्र)

सन् ११३२, कन्नड

परिधाविसंवत्सर, श्रावण शु० ११ रविवार का यह लेख पद्यबद्ध है। वन्दियूरगण के गुणचन्द्र महामुनि के स्वर्गवास का इस में वर्णन है। लिपि १२वी सदी की है अत संवत्सर नामानुसार उपर्युक्त वर्ष बताया गया है। लेख किले में खुशमहल के सामने पडा है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० २४ शि० क्र० बी० ४५

८७

बडोह (विदिशा, मध्यप्रदेश)

सं० ११८९ = सन् ११३३, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में साधु धीतू की पत्नी छीहिली तथा प्राग्वाट कुल के जाल्हण के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० सी १६११

८८

अजमेर संग्रहालय (राजस्थान)

सं० ११९५ = सन् ११३८, संस्कृत-नागरी

वैशाख शु० ३ सं० ११९५ के इस लेख मे पण्डित गुणचन्द्र का नामोल्लेख है। यह शान्तिनाथमूर्ति के पादपीठ पर है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४२१

८९

बघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० ११९५ = सन् ११३८, संस्कृत-नागरी

यह लेख ऋषभदेव की मूर्ति के पादपीठ पर है। वैशाख शु० १२, सं० ११९५ यह इस की तिथि है।

रि० इ० ए० १९५७ ५८, शि० क्र० बी ४२१

९०

गुण्डबळे (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १०६३ = सन् ११४२, कन्नड

कदम्ब वंश के महामण्डलेश्वर मल्लदेव शिशुकलि से राज्य करते थे उस समय पुष्य शु० ५ रविवार शक १०६३ दुन्दुभि सवत्सर का यह लेख है। दण्डनायक माचरस द्वारा निर्मित पार्श्वनाथ मन्दिर को दिये गये दान का इस मे वर्णन है। यह लेख सन्धिविग्रही पमण ने लिखा तथा बप्पोज ने उत्कीर्ण किया था।

क० रि० इ० १९४१-४२, शि० क्र० ३६

९१

बघेरा (अजमेर सग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२०१ = सन् ११४४, संस्कृत-नागरी

पौष व० २ स० १२०१ सोमवार इस तिथि का यह लेख कुन्थुनाथ मूर्ति के पादपीठ पर है। सिद्धान्तिक पद्मसेन, उदयकीर्ति, पाल्हू, धनपति, वील्हण तथा लषम हरिचन्द्र के नाम इस मे अंकित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ४३२

९२

आगरा (उत्तरप्रदेश)

संवत् १२०२ = सन् ११४५, नागरी-संस्कृत

सं० १२०२ मार्ग वदि ५ सोमे श्रीमूलसंघे साधुश्रीजिणचंद्र सुत साधु श्रीअनंतपालचद्रपालौ प्रणमति नित्य आराधा-(?) पंडितश्रीमहेंद्र-देवः

उपर्युक्त लेख आगरा के दि० जैन नया मन्दिर, बेलनगंज मे स्थित श्रीपार्श्वनाथ को काले पाषाण की दो फुट ऊँची परिकर सहित पद्मासन मूर्ति के पादपीठ पर है। स्थानीय पूछताछ से पता चला कि उक्त मूर्ति चोरो के एक गिरोह से बरामद हुई थी। मूलसंघ के साधु जिनचन्द्र के पुत्र अनन्तपाल तथा चन्द्रपाल द्वारा सं० १२०२ में यह मूर्ति स्थापित की गयी थी। पण्डित महेन्द्रदेव ने यह प्रतिष्ठा सम्पन्न करायी थी। दूसरी पंक्ति का अन्तिम शब्द अस्पष्ट है। उक्त विवरण सम्पादक द्वारा ता० ५-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के समय अंकित किया गया था।

९३-९४

देवगढ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १२०२ व १२०८ = सन् ११४६ व ११५२, संस्कृत-नागरी

ये दो जिनमूर्तियो के पादपीठों के लेख हैं। पहला सं० १२०२ का लेख मन्दिर नं० ३ में तथा दूसरा स० १२०८ का मन्दिर नं० १६ में मिला है। तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण अप्राप्त है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १२६, १७४

९५

बघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२०३ = सन् ११४७, संस्कृत-नागरी

कुन्थुनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। वैशाख शु० ९ स० १२०३ यह इस की तिथि है। इस मे दरसा के पुत्र पालू और (भ)रत का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३३

९६

कुयिबाळ (धारवाड, मैसूर)

सन् ११४८, कन्नड

चालुक्य सम्राट् जगदेकमल्ल २ के राज्य वर्ष ११ मे कुय्यबाळ की बसदि के लिए हेर्गडे मादिराज व आदित्यनायक द्वारा कुछ करो की आय अर्पित की गयी ऐसा इस लेख मे वर्णन है ।

(मूल लेख कन्नड में मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० १५५

९७

लखनऊ संग्रहालय (उत्तरप्रदेश)

सं० १२०९ = सन् ११५३, संस्कृत-नागरी

एक जिनमूर्ति के पादपीठ लेख मे उक्त वर्ष ज्येष्ठ शु० ३ बुधवार यह तिथि तथा मूलसघ-लवकचुकान्वय के साधु गोहड का नाम अकित है ।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४२३

९८

सुलतानपुर (पश्चिम खानदेश, महाराष्ट्र)

सं० १२१(?) = लगभग सन् ११५४, संस्कृत-नागरी

इस मूर्तिलेख मे पुन्नाट गुरुकुल के अमृतचन्द्र के शिष्य विजयकीर्ति का नामोल्लेख है ।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी २३१

९९

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

सं० १२१० = सन् ११५४, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७ में यह लेख है। स० १२१० में महासामन्त उदयपाल का इस मे नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५०७

१००

खजुराहो (छतरपुर, मध्यप्रदेश)

संवत् १२१५ = सन् ११५८, नागरी-संस्कृत

॥ श्रीसंवतु १२१५ माघ सुदि ५ रवौ देशीगणे पंडितः श्रीराजनंदि तत्सिष्य पंडितः श्रीभानुकीर्ति अर्जिका मेकुश्रा अभिनन्दनस्वामिनं नित्यं प्रणमंति ॥

यह लेख खजुराहो के श्रीशान्तिनाथ मन्दिर में स्थित जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। तात्पर्य मूल लेख से स्पष्ट ही है। दिसम्बर १९६६ में प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर यह विवरण अंकित किया गया था।

१०१

नासून (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२१६ = सन् ११६०, संस्कृत-नागरी

जैन सरस्वती मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। वैशाख शु० (४) सं० १२१६ के इस लेख मे माथुर संघ के आचार्य चारुकीर्ति के शिष्य सोनम और राहिल की कन्या वीग का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४१६

१०२

जालोर (राजस्थान)

सं० १२१७ = सन् ११६१, संस्कृत-नागरी

श्रावण व० १ गुरुवार स० १२१७ के इस लेख में उद्धरण के पुत्र जिसा(लि)ब द्वारा पार्श्वनाथ मन्दिर मे दो स्तम्भो की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४८६

१०३

उज्जिलि (महबूबनगर, आन्ध्र)

शक १०८९ = सन् ११६७, कन्नड

पुष्य शु० १३ शक १०८९ पराभव संवत्सर उत्तरायण संक्रान्ति के दिन राजधानी उज्जिवोळल के बद्दिजिनालय को कुछ करो की आय व भूमि दान दी गयी ऐसा इस लेख में वर्णन है। यह दान महाप्रधान सेनाधिपति श्रीकरण भानुदेवरस—जो कल्लकेळगुनाडु का दण्डनायक था—ने सोवरे केशवय्य नायक की सहमति से आचार्य इन्द्रसेन पण्डितदेव को दिया था।

(मूल कन्नड में मुद्रित) आन्ध्र प्रदेश आर्कि० सीरीज ३, पृ० ४०-४३

१०४

उज्जिलि (महबूबनगर, आन्ध्र)

लगभग सन् ११६७, कन्नड

मार्गशिर शु० ५ गुरुवार शक ८८८ प्रभव संवत्सर का यह लेख है। इस मे श्रीवल्लभचोळ महाराज द्वारा राजधानी उज्जिवोळल के बद्दिजिनालय के लिए भूमि व उद्यान के दान का वर्णन है। द्राविळ सघ-सेनगण-

कौरूर गच्छ का यह मन्दिर था। यहाँ के आचार्य का नाम इन्द्रसेन पण्डित तथा मुख्य तीर्थंकर मूर्ति का नाम चेन्नपार्श्वदेव था। संपादक के कथनानुसार इस लेख की तिथि ग़लत प्रतीत होती है। ऊपर इसी स्थान का शक १०८९ का लेख दिया है उसी के आस-पास के समय का यह लेख होना चाहिए क्योंकि दोनो में उल्लिखित मन्दिर व आचार्य का नाम एक ही है।

(मूल कन्नड में मुद्रित)　　आन्ध्रप्रदेश आर्कि० सीरीज ३ पृ० ४०-४३

१०५-१०६

सुरपुर खुर्द (जोधपुर, राजस्थान)

सं० १२२९ = सन् ११७२, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर के दो स्तम्भो पर ये लेख है। धाहड की पत्नी तथा देवघर की माता सूहवा द्वारा उक्त वर्ष मे नेमिनाथ मन्दिर में दो स्तम्भ लगवाये गये तथा इस के लिए १० द्रम्म खर्च हुआ ऐसा इन में कहा गया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ५७०-१

१०७

बघेरा (अजमेर संग्रहालय, राजस्थान)

सं० १२३१ = सन् ११७५, संस्कृत-नागरी

पार्श्वनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। चैत्र शु० १३ सं० १२३१ इस की तिथि है। माथुर संघ के साढा के पुत्र दूलाक का नाम इस में अंकित है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ४३०

१०८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२३६ = सन् ११८०, संस्कृत-नागरी

यहाँ का पहाडी पर मन्दिर न० ३४ में एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। स्थापना के उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य भाग अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६२

१०९

हस्तिनापुर (मेरठ, उत्तर प्रदेश)

सं० १२३७ = सन् ११८०, नागरी-संस्कृत

१ संवत १२३७ वैसाख सुदि १२ सोमे
२ श्रीअजयमेरवास्तव्य खंडेलवालान्वये
३ साधुश्रीदेवपालपुत्र वील्हा तस्य
४ भार्या खीद्री तेषामर्थे ढोल्ली
५ स्थितेन पुत्रनेमिचद्रेण श्रीसांतिनाथस्य
६ प्रतिमा कारापिता नित्यं प्रणमति
७ मत्रकारवस्ते पुत्रस्य सामलमाहव
८ गगाधरस्य घटितां .. .. ..

उपर्युक्त लेख हस्तिनापुर के दि० जैन मन्दिर मे रखी हुई काले पाषाण की श्रीशान्तिनाथ की मूर्ति के पादपीठ पर है। मूर्ति की स्थापना अजमेर के खण्डेलवाल जाति के साधु देवपाल के पुत्र वील्हा तथा उन की पत्नी खीद्री के लिए उन के पुत्र ढोल्लो (दिल्ली) निवासी नेमिचन्द्र ने की थी। स्थापना-तिथि पहली पक्ति मे अकित है। आखिरी दो पंक्तियों

का तात्पर्य अस्पष्ट है—सम्भवत: मूर्ति के शिल्पकार का नाम गंगाधर बताया गया है। मूर्ति खड्गासन ४ फुट ऊँची है। चरणो के पास दो चामरधारी है तथा उन के नीचे एक स्त्री व एक पुरुष की आकृतियाँ (जो सम्भवत वील्हा व खीद्री की हैं) अंकित हैं। उक्त विवरण सम्पादक ने ३०-५-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया था।

११०

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२४८ = सन् ११९१, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाडी पर मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। उक्त वर्ष तथा मूर्तिस्थापक साधु सिवराज व उन की पत्नी का इस में उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३१६

१११

येत्तिनहट्टि (रायचूर, मैसूर)

शक १ (१) १७ = सन् ११९४, संस्कृत-कन्नड

इस लेख मे आश्वयुज ब० ११ मगलवार शक १ (१) १७ आनंद सवत्सर के दिन द्राविळ संघ के अजितसेन मुनि के समाधिमरण का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १८७

११२

नगरपालिका संग्रहालय, अलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

लिपि—१२वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

इस संग्रहालय मे अम्बिका देवी की भव्य मूर्ति है जिस के चारों ओर परिकर में अन्य शासनदेवताओ की छोटी मूर्तियो के नीचे निम्नलिखित नाम अंकित है—

१ प्रजापति २ सुषदा ३ काली ४ महाकाली
५ गोरी ६ वैरोजा ७ अनतमती ८ जया
९ बहुरूपिणी १० चामुंडा ११ सरस्वती १२ पदुमावती
१३ विजया १४ अपराजिता १५ महामानुषा
१६ अनंतमती १७ गंधारी १८ मानुषी
१९ जालमालिनी २० मनुजा २१ वज्रसंकला

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५३३ से ५५७

११३

चित्तौड़ (राजस्थान)

लिपि—१२वी सदी की, सस्कृत-नागरी

इस खण्डित लेख में खुमाण वश के राजा जैत्रसिंह का नामोल्लेख है। चित्रकूट के प्राग्वाट यशोनाग के वंश का वर्णन है। चाहमान, परमार व गुर्जरो द्वारा पूजित आचार्य शुभचन्द्र का वर्णन है। जैन मन्दिर के निर्माण के स्मारक के रूप मे इस लेख की रचना शुभकीर्ति ने की तथा सोढाक ने इसे उत्कीर्ण किया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ८३६

११४

गेरसोप्पा (कारवार, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, संस्कृत-कन्नड

इस लेख में जैनधर्मीय शान्त की प्रशंसा है। होल्ल का वर्णन है तथा शंखदेव की प्रशंसा है। लेख खण्डित है।

इस लेख की शिला हावेरी के पुरातत्त्व विभाग कार्यालय में रखी है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ६५ शि० क्र० बी २१५

११५

अमरावती (रायचूर, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

यह लेख बहुत अस्पष्ट हुआ है। इस में कुछ जैन आचार्यों का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२–६३ शि० क्र० बी ८१०

११६

गुडिगेरी (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१२वीं या १३वीं सदी की, कन्नड

इस लेख मे गुडिगेरे की मूरेय बसदि के लिए केतय्य द्वारा कुछ तेल के दान का वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० ३४६

११७

लोकापुर (बेलगाँव, मैसूर)

लिपि–१२वी सदी की, कन्नड

यापनीय सघ-कण्डूर गण के सकळेन्दु सिद्धान्तिक के शिष्य उभय सिद्धान्त चकवर्ती नागचद्रसूरि के उपदेश से कल्लगावुण्ड के पुत्र ब्रह्म ने पुरुदेव (ऋषभनाथ) की मूर्ति स्थापित की ऐसा इस लेख में वर्णन है। इस मूर्ति के शिल्पकार का नाम देवलक्खोज था।

क० रि० इ० १९४२-४३ शि० क्र० ४७

११८

अक्किगुंद (सागली, महाराष्ट्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

मूल सघ-सूरस्त गण के जयकीर्ति भट्टारक के शिष्य पदुमि गौडि, सुगिगौडि (जो हरति निवासी थे) आदि ने अनत तथा चन्दनषष्ठी व्रत के उद्यापन के समय चौबीस तीर्थंकर मूर्ति की स्थापना की ऐसा इस लेख मे वर्णन है।

क० रि० इ० १९४२-४३, शि० क्र० ४९

११९-१२०-१२१

कुंचूर (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१२वी सदी की, कन्नड

ये तीन शिलालेख हैं। पहले मे मूलसंघ-देशीगण-कोण्डकुन्दान्वय के नाडकुमार जोगिसेट्टि के पुत्र बम्मय्य द्वारा एक जिनमूर्ति की स्थापना

का वर्णन है। दूसरे में मूलसंघ-सूरस्थ गण के चामुण्ड के पुत्र कालियण्ण का उल्लेख है। तीसरा लेख शिल्पाकृतियों से सुशोभित शिलापर है किन्तु श्रीमत्परमगम्भीर इत्यादि मंगल श्लोक के बाद टूट गया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० ४७ शि० क्र० बी २९७-९८-९९

१२२

गंगापुरम् (महबूबनगर, आन्ध्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

चेन्नकेशवमन्दिर के सामने पडी एक शिला पर यह लेख है। तुबाळ के महावड्डव्यवहारि मणिगार काळिसेट्टि द्वारा एक जिनमन्दिर के निर्माण तथा चेन्न पार्श्वनाथ मूर्ति की स्थापना का इस में वर्णन है। उक्त मन्दिर को कुछ वस्तुओं पर लगाये गये करो की आय अर्पित की गयी थी। चालुक्य वंश के तैलप और नयकीर्ति देव की प्रशसा भी लेख में है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ३९

१२३

हळेबीड (हासन, मैसूर)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

इस खण्डित लेख में मलधारिदेव के शिष्य दासिसेट्टि द्वारा बनवाये आलय (सम्भवतः जिन मन्दिर) का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४७७

१२४

नागै (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि-१२वीं सदी की, कन्नड

इस लेख मे श्रीमत्परमगम्भीर इत्यादि मंगलाचरण है। शेष भाग अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ४५९

१२५

तेगली (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि-१२वी सदी की, कन्नड

पाण्डुरग मन्दिर मे रखी एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। यापनीय सघ-वाडयूर गण के नागवीर सिद्धान्तदेव के शिष्य बम्मदेव ने यह मूर्ति स्थापित की ऐसा लेख मे बताया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ५११

१२६

चितापुर (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि-१२वी सदी की, कन्नड

यह लेख रेलवे स्टेशन के पास पडा है। मूलसंघ-देशीगण पुस्तक-गच्छ-कोण्डकुन्दान्वय की घटान्तकिय बस्ति का जीर्णोद्धार रविदेवरस, गोविन्दरस, पिरिय मधुवरस तथा किरिय मधुवरस ने किया ऐसा इस मे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९ ६०, शि० क्र० बी ४२८

१२७

रामलिंग मुद्गड (उस्मानाबाद, महाराष्ट्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

इस शिला की एक बाजू में अभयनन्दि भट्टारक का नाम है। दूसरी बाजू में दिवाकरनन्दि सिद्धान्तदेव की निसिधि का उल्लेख है। तीसरी बाजू में कोण्डकुन्दान्वय के कई आचार्यों का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी ३३६

१२८

कोलनुपाक (नलगोण्डा, आन्ध्र)

लिपि–१२वीं सदी की, कन्नड

जैन मन्दिर में रखे एक स्तम्भ पर यह लेख है। श्रीपुष्पसेनदेव यह नाम इस में अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० बी १००

१२९

पूना (महाराष्ट्र)

लिपि–१२वीं सदी की, संस्कृत–कन्नड

नेमिचन्द्र यति द्वारा नेमिनाथमूर्ति की स्थापना का इस पादपीठ में लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ पृ० ३५ शि० क्र० बी १५९

१३०

पेद्द तुम्बळम् (कुर्नूल, आन्ध्र)

लिपि–१२वी सदी की, कन्नड

एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। मूलसंघ–देशीगण–पोस्तकगच्छ–कोण्डकुन्द अन्वय के चन्द्रकीर्ति भट्टारक के शिष्य चेंचिसेट्टि की पत्नी बोचिकब्बे द्वारा गोम्मट पार्श्वजिन की स्थापना का इसमे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ पृ० ४३ शि० क्र० बी ४४

१३१-१३२-१३३-१३४

देवगढ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि–११वीं-१२वी सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरो मे मिले है। एक मे शान्तिनाथ मन्दिर, राजा नल्लट तथा व्यापारी चक्रेश्वर के नाम अकित है। यह श्लोकबद्ध है। दूसरा मन्दिर न० १६ के पूर्व मे एक शिला पर है। इसमे श्रीशुभ कीर्ति, माघनन्दि,—रचन्द्र, कामदेव, गागेयनृप ये नाम पढे गये है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४११, ४१६

यहो के मन्दिर न० १९ में इसी समय की लिपि मे निम्नलिखित शब्द पाषाण खण्डो पर पढे गये हैं— १) बालचन्द्र निर्मित दानशाला २) संझरा पुत्र चन्द्रना ३) जयदेव. प्रणमति। मन्दिर नं० २४ में इसी समय की लिपि मे यह लेख मिला है—भोणी प्रणमति।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०५-६

१३५-१३६-१३७

उखळद् (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १२७२ = सन् १२१५, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर की तीन मूर्तियो के पादपीठो पर ये लेख है। माघ शु० ५ सं० १२७२ को मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के भ० धर्मचन्द्र ने ये मूर्तियाँ स्थापित की थीं। दूसरे लेख में राजा प्रतापदमनदेव का नाम भी है। तीसरे लेख मे राजा रायहमीर देव का नाम है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१० से २१२

१३८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १२७२ = सन् १२१५, संस्कृत-नागरी

यहाँ की पहाडी पर मन्दिर न० ५७ मे रखी हुई मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस मे उक्त वर्ष तथा मूलसंघ–सरस्वती गच्छ के भ० धर्मचन्द्र का नाम अकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३, शि० क्र० बी ३७३

१३९

हुगरिटगे (गुलबर्गा, मैसूर)

शक ११४७ = सन् १२२४, कन्नड

आषाढ़ शु० ११ शुक्रवार शक ११४७ तारण संवत्सर के दिन मूल-संघ–देशीगण–पुस्तकगच्छ–गोमिनि अन्वय के आचार्य देवचन्द्र का समाधिमरण हुआ था। उन की स्मृति मे बब्बर कलिसेट्टि ने यह लेख स्थापित किया था।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ४६५

१४०

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२४५, कन्नड

भाद्रपद शु० ३ रविवार विश्वावसु संवत्सर के दिन कल्याणकीर्ति भट्टारक के शिष्य बम्मरय्य के समाधिमरण का यह स्मारक है। तिथि-वार व सवत्सरनामानुसार उक्त वर्ष बताया गया है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८१

१४१

अगरखेड (बीजापुर, मैसूर)

शक ११७० = सन् १२४८, कन्नड

यादव राजा कन्नर के राज्य मे ज्येष्ठ पूर्णिमा शक ११७० कीलक सवत्सर के दिन चन्द्रग्रहण के अवसर पर देशी गण के आचार्यों को मिले हुए दान का इस लेख मे वर्णन है।

(मूल कन्नड में मुद्रित) सा० इ० इ० २० पृ० २६५

१४२

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२७१, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्यवर्ष १२ मे ज्येष्ठ व० ११ शुक्रवार प्रजापति सवत्सर के दिन अनतकीर्ति भट्टारक की शिष्या सातिसेट्टि की पत्नी के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८०

१४३

हिरेकोन्नति (धारवाड, मैसूर)

सन् १२७८, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य में चैत्र ब० १० सोमवार बहुधान्य संवत्सर के दिन जिनभट्टारक के किसी शिष्य के समाधिमरण का यह स्मारक है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी २७१

१४४

सिरपुर (अकोला, महाराष्ट्र)

सं० १३३४ = सन् १२७८, संस्कृत-नागरी

इस ग्राम की सीमा पर स्थित पवळी मन्दिर नामक जिनालय के द्वार पर तीन पंक्तियों का यह लेख है। यह बहुत अस्पष्ट हुआ है। तथापि श्रीमाल वंश के ठ० राम, संघपति ठ० जगसीह तथा अंतरिक्ष श्री पार्श्वनाथ ये शब्द पढे जा सकते हैं। अकोला जिला गजेटियर (सन् १९१० में प्रकाशित) में डब्लू० हेग ने इस की तिथि संवत् १३३४ इस प्रकार दी है (उन्होंने इस का रूपान्तर सन् १४०६ दिया है वह कैसे इस का स्पष्टीकरण नही मिलता)। मूल लेख तथा उस के फोटो को देखकर सम्पादक ने यह विवरण जून १९६८ मे अंकित किया था। अनेकान्त वर्ष २१ पृ० १६२ पर श्रीनेमचन्द डोणगावकर ने इस लेख के वाचन का प्रयास किया है। उन्होंने लेख की तिथि शक १३३८ पढ़ी है।

१४५-१४६-१४७

चक्रनगर (इटावा, उत्तरप्रदेश)

सं० १३३५ = सन् १२७९, संस्कृत-नागरी

ये तीन लेख जिनमूर्तियो के पादपीठो पर हैं। फाल्गुन शु० ८ सोमवार स १३३५ यह इन की तिथि है। मूलसंघ के गोलाराटक अन्वय के भोजदेव द्वारा इन मूर्तियो की स्थापना हुई थी। एक लेख मे भोजदेव के साथ साधु कीकदेव का नाम भी है। तथा एक लेख मे गोलाराडान्वय इस प्रकार उन की जाति का नाम लिखा है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ४८७-८९

१४८

सुतकोटि (धारवाड, मैसूर)

सन् १२८३, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य के १४वे वर्ष मे मार्गशीर्ष ब० ११ शुक्रवार, स्वर्भानु सवत्सर के दिन कत्तिय बोम्मिसेट्टि के पुत्र देवसेट्टि का समाधिमरण हुआ ऐसा इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० बी ४१३

१४९

हथूंडी (जोधपुर, राजस्थान)

सं० १३४५ = सन् १२८८, संस्कृत-नागरी

इस लेख मे उक्त वर्ष मे साधु हेमाक द्वारा महावीर मन्दिर को प्रतिवर्ष २४ द्रम्म दान दिये जाने का वर्णन है। चाहमान राजा सम्मंतसिंह का नाम भी अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२, शि० क्र० सी १७२७

१५०-१५१

हिरे अणजि (धारवाड, मैसूर)

शक १२१५=सन् १२९३, कन्नड

यादव राजा रामचन्द्र के राज्य में मार्गशिर ब० (तिथि खण्डित) विजय संवत्सर, शक १२१५ के दिन एक बसदि को भूमि और धन के दान का इस लेख मे वर्णन है। महाप्रधान सर्वाधिकारी परशुरामदेव का तथा रम्बादेवी के पुत्र कुमार हरिपिसेट्टि का नाम भी लेख में है। यह शिला कलमेश्वर मन्दिर में लगी है। यही के वीरभद्र मन्दिर में लगी एक शिला पर इसी वर्ष पौष मास के (तिथि खण्डित) सोमवार को उपर्युक्त हरिपिसेट्टि द्वारा तथा अन्य संघो द्वारा नेमिनाथ देव को पूजा के लिए कुछ धन दिये जाने का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६०-६१, शि० क्र० बी ४१९-२०

१५२

चित्तौड़ (राजस्थान)

स० १३५७=सन् १३००, संस्कृत-नागरी

यह एक खण्डित लेख है। इस मे धर्मचन्द्र तथा उन की गुरु परम्परा का तथा एक मानस्तम्भ की स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५६-५७, पृ० ५१ शि० क्र० बी १०८

लेख का फोटो देखने से धर्मचन्द्र की गुरुपरम्परा का विवरण इस प्रकार मिला —

मूलसंघ–नन्दिसंघ–बलात्कारगण में कुन्दकुन्द आचार्य की परम्परा में केशवचन्द्र (ये तीन विद्याओं में विशारद थे तथा इन के एक सौ एक शिष्य थे)–देवचन्द्र–अभयकीर्ति–वसन्तकीर्ति–विशालकीर्ति–शुभ-

कीर्ति–धर्मचन्द्र । लेख में २५ पंक्तियाँ तथा २९ श्लोक हैं। इस को प्रथम पंक्ति में पुण्यसिंह का नाम भी पढ़ा जा सकता है।

१५३-१५४-१५५

चित्तौड (राजस्थान)

१३वी सदी, संस्कृत-नागरी

अनेकान्त वर्ष २२ के प्रथम अंक में श्री रामवल्लभ सोमानी, जयपुर, ने चित्तौड के कीर्तिस्तम्भ के तीन लेख प्रकाशित किये हैं। तीनो मे स्तम्भ के स्थापनाकर्ता साह जीजा तथा उन के वंश का विवरण प्राप्त होता है तथा इन में से पहले मे उसी गुरुपरम्परा का वर्णन है जिस का ऊपर १५२वें लेख में उल्लेख आया है। अत ये लेख भी तेरहवी सदी के सिद्ध होते है। पहले लेख मे ४५ श्लोक है। इस के प्रारम्भ मे दीनाक तथा उन की पत्नी वाच्छी के पुत्र नाय द्वारा एक मन्दिर-निर्माण का वर्णन है। नाय की पत्नी नागश्री तथा पुत्र जीजू थे। इन्होंने चित्तौड में चन्द्रप्रभ मन्दिर का निर्माण कराया व खोट्टर नगर में भी एक मन्दिर बनवाया। इन के पुत्र पूर्णसिंह (इन का नाम पुण्यसिंह इस रूप मे भी लिखा है) थे। इन के धन और दान की ४ श्लोकों में प्रशंसा की है। इन के गुरु विशालकीर्ति के शिष्य शुभकीर्ति के शिष्य धर्मचन्द्र (लेख में यह नाम खण्डित रूप मे श्रीधर्मव इतना पढा गया है) थे। राजा हमीर ने उन का सम्मान किया था। उन के द्वारा मानस्तम्भ की प्रतिष्ठा का अन्तिम श्लोक में उल्लेख है। दूसरे लेख का मुख्य भाग स्याद्वाद की प्रशंसा मे लिखा गया है। इस की आखिरी पंक्ति में बघेरवाल जाति के सा नाय के पुत्र जीजाक द्वारा स्तम्भ-निर्माण का उल्लेख है।* तीसरे

* इस लेख का सारांश रि० इ० ए० १९५४-५५ में (शि० क्र० ४९१) मिलता है। वहाँ जीजाक की जाति का नाम गलती से पेरवाल पढा गया है।

लेख में संस्कृत निर्वाण भक्ति के १२ श्लोक दिये हैं तथा अन्तिम भाग में जीजा से युक्त संघ की मंगलकामना प्रकट की गयी है। नीचे तीनो लेखो का मूल पाठ दिया जा रहा है—

(अ)

सूनुस्तस्य तु दीनाको वाच्छीभार्यासमन्वितः।
अथः सू (क) रोति पूजायै पुरंदरस(श)चोरुचम् ॥ ११॥

नायाख्य सूनुरस्यासीत् नायका (को) धर्मकर्माण।
अथवा न.......... ....कर्मसु सर्द्ध (र्व) दा ॥१२॥

विशालकच्छकेतुच्छच्छायाछलध्वजव्रजैः।
निजप्रासादसौधाग्रनृत्यतुंगकरैरिव ॥१३॥

तत्र यः कारयामास.... .. . . ।
मंदिरं सुंदरं रम्यकाम्यं सम्यक्त्ववे(चे)तसाम् ॥१४॥

स्व.सोपानापदेशं द्रढयति च जिनः श्रीपदोत्कंठितानां
सोपानैर्मंडपोपि प्रकटयति ह... विवाहः।
उच्चै. प्रासादचचत्कनकमयमहाकुंभशुंभद्ध्वजाग्रै-
रारूढा नृत्यतीव प्रभुपदजयिनी मानसी सिद्धिरस्य ॥१५॥

नागश्रीसंगतो देन... ...... जडाग्नयः।
कालकूटान्वयोन्माथी यो वृषांक. कलौ युगे ॥२६॥

हाल्कजिजुस्तथा न्योट्टलसमभिधः श्रीकुमारस्थिराख्य
षष्ठ· श्रीए...पि विजयिनश्चक्रवर्ती श्रियस्तम्।
तेषां या(यो)जिजुनामाजनि जनिहननप्राणपौराणमार्ग्यः
प्रशातिश्रीत्रिवर्गप्रभुरभवदसौ जैन [धर्माभिलषी] ॥२७॥

यश्चंद्रप्रभमुच्चकूटघटनं श्रीचित्रकूटे नटत्-
कोत्रत्पल्लववताळवीजनमरुप्रध्वस्तसुर्याश्रमे।

श्रीचैत्ये तलहट्टिका समघटी श्रीसादपीध्या ······
······ वि जिनेश्वरस्य सदन श्रीखोट्टरे सत्पुरे ॥२८॥
वूढाखोगरकेमघाच सुमिरौ जाने समारभ्य तन्-
मानस्तंभमहादिमं ···मिदं निर्वर्त्य · सत्यं स य
सुमंगळाय जयिने श्रीपूर्णसिंहाय वै ।
गीर्वाणोदयिनीश्च यं समगम धर्मानुरागोल्वणः ॥३०॥
पुण्यसिंहोपि धर्मधुराधवलबृंहण. ।
जितारि पितृसद्भारदत्तस्कंधो जयत्यसौ ॥३१॥
किंचिदारोपितस्कंधोभ्यासयोगाद्दिने दिने ।
विषमेष्विवलो भूयो धवल. शवलोचनः ॥३२॥
अन्वयागतसद्धर्मभारधोरेयविक्रमः ।
अकिर्णाकष्टथुस्कंध पुण्यसिंहो महाद्भुतम् ॥३३॥
यत्पुण्यं निटले भाति भारतीचक्रमंडले ।
यत्कीर्तिस्त्रिजगत्सौधे धर्मलक्ष्मीमलांबुजे ॥३४॥
अपूर्वोयं धनी कश्चिद् यच्छन्नपि यदृच्छया ।
वर्द्धयत्यनिशं स्व स्वं परं सत्पुण्यसंचयः ॥३५॥
उररीकृतनिर्वाहनिव सौम्यैश्च संपद ।
स्थिराश्रयपदं भेजुस्तेजोकृमित्तविग्रहा ॥३६॥
पुण्यसिंहो जयत्येष दानिनां जनकुञ्जर ।
यत्कीर्तिकामिनीनेत्रे कज्जलं भुवनांबरम् ॥३७॥
किं मेरुः कनकप्रभः किमु हरिर्गीर्वाण···प्रिय·
किं सोमः सकलं चकार ···पुण्योदयात् ।
पेयं धर्मधुराधरा(रो)विजयते श्रीपूर्णसिंहः कलौ ॥३८॥
किं मेरुः किं नमेरु किमुत सुरगुरु. किं हरि· किं मुरारिः
किं रुद्र· किं समुद्रः किमुत च विलसच्चंद्रिकाचंद्रचंद्रः ।

उत्तस्या स्वेष्टदस्या विमलतरधिया सद्धि भूत्या विमस्या
गोनीत्या रत्नभूत्या सकलतनुतयापूर्णसिंहः पृथिव्याम् ॥३९॥

ध्येयस्तस्य विशालकीर्तिमुनिपः सारस्वतश्रीलता-
कंदोद्भेदघनायमानवचनः स्याद्वादविद्यापतिः ।
वर्गस्थासगर्वचोविलोमविलसद्मोलिद्रीयस्यस
क्षोणीचवत्समयास्तपोनिधिसावासीद्धरित्रीतले ॥४०॥

कतार्काकाछ(क)श्यं कुसित परवादिद्विपमदं
क्व नि. श्रीमत्प्रेमप्रचुररसनिस्यंदिकविता ।
उपन्यासप्रासे क्व च विहितवर्गव्यजनिता
मनोगम्यं रम्यं श्रुतमिह यदीयं विलसितम् ॥४१॥

योगानंगत्रिनेत्रस्त्रिभुवनरचनानूतनेपि त्रिनेत्रो
मीमांसावाग्निरोधप्रकटनदिनकृत् सांख्यमत्ते भसिंहः ।
उद्यद्बौद्धाहिदर्पस्फुरदुजगरुड. प्रौढयाधीकशैल-
श्रेणीसंपातशपाकलितवरवचोवर्णिनोवल्लभो य ॥४२॥

तत्पुत्र शुभकीर्तिरूर्जिततपोनुष्ठाननिष्ठापतिः
श्रीससारविकारकारणगुणस्तृप्यन्मनोदेवतः ।
प्रारब्धाय पदप्रयाणकलसत्पंचाक्षरोच्चारण-
पुरयत्कीकृत निर्मये हिमकक्षब्धत्समाध्याश्रिठः ॥४३॥

सिद्धांतोदधिवीचिवद्धनरत्रद्वंद्रोचितंद्रोधुना
विख्यातोस्ति समप्रशुद्धचरितः श्रीधर्मच'''यतिः ।
तत्कीर्त्तिः किल धारवार्द्धिनृपतिश्रीनारसिंहादिह
स्त्रीकृत्य प्रकटीचकार सततं हमीरवीरोप्यसौ ॥४४॥

तच्चरणकमलमधुपे मानस्तंभप्रतिष्ठया मानम् ।
प्रकटीचकार भुवने धनिक. श्रीपूर्णसिंहोत्र ॥४५॥

(ब)*

·· तिसायनसुधासद्भावमंद्रोदयः ॥१॥

दुर्वारप्रतिपक्षशक्तिविभवन्यग्भावभग्नोद्गत-
स्वव्यापारमनारतं यदव् ······ पद
स्वाग्राकाररसानुरक्तिखचितं क्षोमभ्रमावर्तितं ।
चित्तक्षेत्रनियन्त्रितं महदणुव्यात्यंकितं विघ्नित
त्यागादि ·· ··तत्
कौटस्थ्य प्रतिपद्य वंदथ सदामुद्धिं परां बिभ्रता ॥४॥

प्रत्येकार्पितसप्तभंग्युपहितैर्धर्मैरनंतैर्विधि-
··· तद्रूपविद्रूपशश्वदनेहसा नवनवीभावं स्वसात्कुर्वता ।
भावान्निर्विशत पराकृततृषो द्रव्यानशेषा-
··· ···मचलस्वच्छप्रभग स्फुरन्
दूर स्वैरमसकरव्यतिकर तिर्यङ् नलेतोर्ध्वताम् ॥७॥

आकारैर्वियुत युत च ·
···स्वमहसि स्वार्थप्रकाशात्मके
मज्जंतो निरुपाख्यमोघचिदचिन्मोक्षार्थितीर्थक्षिप ।
कृत्वा नाद्य ·
···स्थितिवृते स्वर्गापवर्गाप्तये ।
य· प्राग्तैरनुमीयते सुकृतिना जांजेन निर्मापित
स्तम· मै ··
····सुभालोकैन कैरच्यते ॥
बघेरवालजातीय सा नाथ सुत जांजाकेन
स्तंभ. कारापितः ॥शुभं भवतु॥

---

* इस लेखके फोटोसे हमने अनेकान्तमें प्रकाशित पाठमें आवश्यक सुधार किया है।

(क)

यत्रार्हतां गणभृतां श्रुतपारगाणां निर्वाणभूमि रिह भारतवर्षजानाम् ।
तामद्य शुद्धमनसा क्रियया वचोभि संस्तोतुमुद्यतमति' परिणौमि भक्त्या ॥१

कैलाशशैलशिखरे परिनिर्वृतोसौ शैलेशिभावमुपपद्य वृषो महात्मा ।
चंपापुरे च वसुपूज्यसुत. सुधीमान् सिद्धिं परामुपगतो गतरागबंधः ॥२॥

यत्प्रार्थ्यते शिवमयं विबुधेश्वराद्यै पाषंडिभिश्च परमार्थगवेषशीलै' ।
नष्टाष्टकर्मसमये तदरिष्टनेमिः संप्राप्तवान् क्षितिधरे बृहदूर्जयते ॥३॥

पावापुरस्य बहिरुन्नतभूमिदेशे पद्मोत्पलाकुलवतां सरसां हि मध्ये ।
श्रीवर्धमानजिनदेव इति प्रतीतो निर्वाणमाप भगवान् प्रविधूतपाप्मा ॥४॥

शेषास्तु ये जिनवराहतमोहमल्ला ज्ञानार्कभूरिकिरणैरवभास्य लोकान् ।
स्थानं परं निरवधारितसौख्यनिष्ठं सम्मेदपर्वततले समवापुरीशा ॥५॥

आद्यश्चतुर्दशदिनैर्विनिवृत्तयोग षष्ठेन निष्ठितकृतिर्जिनवर्धमान ।
शेषाविधूतघनकर्मनिबद्धपाशा मासेन ते यतिवरास्त्वभवन् वियोगा. ॥६॥

माल्यानि वाक्स्तुतिमयै कुसुमै सुदृब्धान्यादायमानसकरैरभित: किरन्तः।
पर्येम आदृतियुता भगवन्निषद्या संप्रार्थिता वयमिमे परमां गतिं ता: ॥७॥

शत्रुंजये नगवरे दमितारिपक्षा' पण्डो सुता परमनिर्वृतिमभ्युपेता' ।
तुंग्यां तु संगरहितो बलभद्रनामा नद्यास्तटे जितरिपुश्च सुवर्णभद्र. ॥८॥

द्रोणीमति प्रबलकुंडलमेंढ्रके च वैभारपर्वततले वरसिद्धकूटे ।
ऋष्यद्रिके च विपुलाद्रिबलाहके च विंध्ये च पौदनपुरे वृषदीपके च ॥९॥
सह्याचले च हिमवत्यपि सुप्रतिष्ठे दंडात्मके गजपथे पृथुसारयष्टौ ।
ये साधवो हतमलाः सुगतिं प्रयाता. स्थानानि तानि जगति प्रथितान्य-
भूवन् ॥१०॥

इक्षोर्विकाररसपृक्तगुणेन लोके पिष्टोधिकं मधुरतां समुपैति यद्वत् ।
तद्वच्च पुण्यपुरुषैरुषितानि नित्यं स्थानानि तानि जगतामिह पावनानि ॥११॥

इत्यर्हतां शमवतां च महामुनीनां प्रोक्ता मयात्र परिनिर्वृतिभूमिदेशाः ।
ते मे जिना जितभया मुनयश्च शांता दिश्यासुराशु सुगतिं निरवद्य-
सौख्याम् ॥१२॥

तेन सुवानंतजिने(श्वरा)णां मुनिगणानां च
(निर्वाण)स्थानानि निवृत्यै(वा)पांतु संघं जीजान्वितं सदा ॥

१५६-१५७

तवन्दी (स्तवनिधि) (बेलगांव, मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

यहाँ जिन मूर्तियो के पादपीठो पर ये दो लेख है—

अ) पं० १) श्रीमतु द्रविळ संघद
२) सुपार्श्वदेवरु
ब) पं० १ श्री
२ मूलसंघ
३ बळात्कार
४ गणश्री

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४९३-९४

१५८

भंकूर (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

यह लेख जैन मन्दिर मे तीन मूर्तियो के नीचे एक पादपीठ पर है जिस में श्रीकनककीर्ति इतने अक्षर ही पढे जा सकते हैं ।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ५१०

१५९

मडिकोण्ड (वरंगल, आन्ध्र)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड-तेलुगु

यहाँ एक पहाडी पर छोटे से तालाब के पास एक चट्टान पर जिन-ब्रह्मयोगी ऐसा नाम खुदा है ।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी १११

१६०

हिरेकोनति (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

इस समाधिमरण के स्मारक मे आश्विज ५ सोमवार क्षय संवत्सर इस तिथि का तथा शान्तिभट्टारक एवं किसी व्रतीन्द्र का उल्लेख हुआ है ।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी २८१

१६१-१६२-१६३-१६४-१६५

अलदगेरि (धारवाड, मैसूर)

लिपि–१३वीं सदी की, कन्नड

ये पाँच निषिधि लेख हैं । एक में आश्विन शु० (५) रविवार, पिंगल संवत्सर में महामण्डलाचार्य जयकीर्ति भट्टारक के शिष्य माणिकदेव के समाधिमरण का उल्लेख है । दूसरे में महामण्डलाचार्य बालचंद्र त्रैविद्यदेव के शिष्य मल्लय के समाधिमरण की तिथि आश्विन शु० ७ सोमवार, प्रभव संवत्सर ऐसी बतायी है । तीसरे में सूरस्थ गण-चित्रकूटान्वय के नागचन्द्र के शिष्य नन्दिभट्टारक का उल्लेख है । चौथे में सूरस्थ गण के

नन्दिभट्टारक के शिष्य नयकीर्ति मुनीन्द्र की शिष्या मायक्क के समाधि-मरण का उल्लेख है। पाँचवें मे नन्दिभट्टारक, नयकीर्ति भट्टारक की एक शिष्या तथा कनकप्रभ का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, पृ० ४० शि० क्र० बी २२२ से २२६

१६६

लिंगदेवरकोप (धारवाड, मैसूर)

लिपि—१३वी सदी की, कन्नड

इस अधूरे लेख मे आश्वयुज शु० १ श्रीमुख संवत्सर यह तिथि दी है तथा मूल संघ-सूरस्थ गण के नन्दिभट्टारक का नामोल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५७-५८, शि० क्र० बी ३०२

१६७

सुलतानपुर (पश्चिम खानदेश, महाराष्ट्र)

लिपि—१३वी सदी की, संस्कृत-नागरी

यह एक जिनमूर्ति के पादपीठ का लेख है। इस मे स्थापक का नाम लाषण अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी २३२

१६८

कोंभावी (गुलबर्गा, मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

इस लेख में कोण्डकुन्दान्वय के मलधारि देव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६४८

१६९

कुंदगोळ (मैसूर)

लिपि—१३वीं सदी की, कन्नड

जिनमूर्ति के पादपीठ के इस लेख मे मूलसंघ यह नाम अंकित है ।

सा० इ० इ० २० पृ० ३६४

१७०-१७१-१८२-१७३-१७४

देवगढ (झांसी, उत्तरप्रदेश)

लिपि—१२वीं-१३वी सदी की, संस्कृत-नागरी

ये लेख यहाँ के जैन मन्दिरो मे मिले है । पहला मन्दिर नं० ७ में चरणपादुका के पास है तथा इस में गोल्लापुर के गोपाल का नाम अंकित है । दूसरा पार्श्वनाथ मूर्ति की स्थापना का वर्णन करता है तथा इस में माधवदेव के शिष्य प्राग्वाट धन्नाक के पुत्र गंगाक व शिवदेव के नाम अकित है, यह मन्दिर नं० १२ मे है ।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५०३, ५१६

यही के मन्दिर नं० १४ के एक स्तम्भ लेख मे मूल सघ कुंदकुंदाचार्यान्वय के केशवचंद्र, अभयकीर्ति तथा वसंतकीर्ति के नाम अंकित हैं (इन का समय बारहवी-तेरहवी सदी अनुमानित है) ।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१५

मन्दिर नं० १९ मे प्राप्त एक अन्य लेख में (जो १३वी सदी की लिपि मे बताया गया है) कई पण्डितो द्वारा एक दानशाला के निर्माण का वर्णन है । यहाँ के दूसरे एक लेख में किसी गोष्ठी की चर्चा है ।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०२-३

१७५-१७६-१७७

हिरेअणजि (धारवाड, मैसूर)

१३वीं सदी, कन्नड

ये तीन लेख समाधिमरण के स्मारक हैं। पहले में आषाढ शु० ११ सोमवार श्रीमुखसंवत्सर को किसी श्राविका के स्वर्गवास का उल्लेख है, उस समय के राजा का नाम यादव रामचन्द्र बताया है। दूसरे में किसी सेट्टि का नाम अंकित है। तीसरा अस्पष्ट हो गया है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ४२२-२४

१७८

बड़ौदा संग्रहालय (गुजरात)

सं० १३५७ = सन् १३०१, संस्कृत-नागरी

वैशाख व० ५ शुक्रवार सं० १३५७ को श्रीबाथा की पत्नी लक्ष्मीदेवी के लिए लाखाक ने आदिनाथ मूर्ति की स्थापना की ऐसा इस लेख में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी० २९९

१७९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १३८८ = सन् १३३१, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक पीतल की मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इसमें उक्त वर्ष तथा मूर्तिस्थापक साधु अभयदेव की पत्नी माल्ही के पुत्र केसो का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९८

१८०

केंभावी (गुलबर्गा, मैसूर)

शक १२६२ = सन् १३४०, कन्नड

दोसिगरबावि नामक कुँए के पास यह लेख है। कार्तिक व० ३ मंगलवार शक १२६२ विक्रम संवत्सर के दिन मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ-बलात्कारगण-कुंदकुंदान्वय के लोकचंद्र देव के समाधिमरण का यह स्मारक महादेवश्रेष्ठी के पुत्र ने स्थापित किया था।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६४७

१८१

केसवार (गुलबर्गा, मैसूर)

शक १३०७ = सन् १३८५, कन्नड

कुँवार देगुल नामक मन्दिर में लगी हुई शिला पर यह लेख है। चैत्र व० २ बुधवार शक १३०७ क्रोधन संवत्सर के दिन अमरकीर्ति के शिष्य माघनन्दि के शिष्य... मतिसेट्टि वैश्य द्वारा पार्श्वनाथ मन्दिर के जीर्णोद्धार का इसमें वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६२८

१८२

पानुगल्लु (महबूब नगर, आन्ध्र)

शक १३१९ = सन् १३९७, संस्कृत-तेलुगु

विजय नगर के राजा हरिहर (द्वितीय) के शासन काल में पौष शु० ११ रविवार, शक १३१९ ईश्वर संवत्सर के दिन इम्मडि बुक्क (इसे

द्विगुण बुक्क भी कहा गया है) द्वारा पानुगल्लु नगर तुरुष्क वीरो से जीत लिया गया ऐसा इसमें वर्णन है। हरिहर के मन्त्री बैच दण्डाधिप तथा बैच के पुत्र इरुगप की प्रशसा मे इस लेख मे निम्नलिखित श्लोक हैं—

मंत्रश्रीजितदेवदानवगुरु प्रख्यातधीवैभवः
शास्ता दुर्जनसंचयस्य महतामानन्दनानन्दनः ।
विश्वानंदितसद्गुण. समजनि श्रीबैचदंडाधिपः
तस्यामात्यवरो वरेण्यचरितश्चातुर्यसीमा विधे. ॥
वीरश्रीवरणोचितं हरिहरक्षोणीपतिस्तत्सुतं
साम्राज्यप्रतिपालनापटुतरप्रज्ञाबलोदंचित ।
धीमानिरुगपमन्त्रिवर्यमकरोद्दडाधिनाथेश्वरं
विद्याशौर्यविवेकधैर्यकरुणासत्यक्षमालंकृतं ॥

ए० इं० ३७ पृ० ५०

(लेख मे वर्णित इम्मडि बुक्क को सम्पादक ने इरुगप का बन्धु माना है किन्तु उसे महीपति तथा उसके पुत्र अनन्त को क्षमापति कहा गया है अत वह राजा हरिहर का ही बन्धु था ऐसा प्रतीत होता है। यहाँ वर्णित बैच तथा इरुगप का जैन शिलालेख संग्रह भाग १ तथा ३ मे कई लेखो मे वर्णन आ चुका है।)

१८३

तवन्दी (स्तवनिधि) (बेलगाँव, मैसूर)

शक १ (३) २२ = सन् १४००, संस्कृत-कन्नड

पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। चैत्र शु० १२ सोमवार शक १(३)२२ विक्रम संवत्सर के दिन लक्ष्मीसेन भट्टारक ने उक्त मूर्ति स्थापित की थी। मन्दिर का निर्माण मूलसंघ–देशियगण–पुस्तकगच्छ के

वीरनंदिसिद्धान्तचक्रवर्ती की शिष्या लछियादेवी—जो सेनरस की प्रपितामही थी— द्वारा किया गया था। मूर्तिकार का नाम जिन्नोज बताया है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४१२

१८४

बोरगाँव (बेलगांव, मैसूर)

शक १३२२ = सन् १४००, कन्नड

जैन मन्दिर की दीवाल मे लगी शिला पर यह लेख है। वैशाख व० १२ गुरुवार शक १३२२ विक्रमसंवत्सर के दिन गुणचन्द्र भट्टारक के शिष्य सकलचन्द्रदेव के समाधिमरण का इसमे उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि क्र० बी ३४७

१८५

दौलताबाद (औरंगाबाद, महाराष्ट्र)

लिपि—१४वी सदी की, कन्नड

जैन मन्दिर के भग्नावशेषो में मिला हुआ यह लेख बहुत अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ७३६

१८६-१८७-१८८-१८९

हिरेअणजि (धारवाड, मैसूर)

लिपि—१४वीं सदी की, कन्नड

ये चार लेख समाधिमरण के स्मारक है। पहले में अक्कसालि नेमोज के स्वर्गवास का उल्लेख है। इसकी तिथि ज्येष्ठ शु० ५ गुरुवार प्लवंग

संवत्सर बतायी है। दूसरे में रविवार (तिथि खण्डित) धातु संवत्सर के दिन किसी श्राविका के स्वर्गवास का उल्लेख है। इसमें अणजे ग्राम व शान्तिनाथदेव के नाम भी हैं। तीसरे में जक्कले के पुत्र सोम के स्वर्गवास का उल्लेख है। चौथा लेख अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ४२५ से ४२८

१९०-१९१

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

लिपि १४वीं सदी की, संस्कृत–नागरी

ये दो लेख मन्दिर न० ७६ मे स्थित मूर्तियो के पादपीठो पर हैं। एक मे काष्ठासंघ, स० तेजपाल की पत्नी हरिसिरि तथा पुत्र रावला के नाम है। रावला की पत्नी लाडा साहु नरपति की कन्या थी यह भी बताया गया है। दूसरा लेख अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२–६३ शि० क्र० बी ३९९, ४०१

१९२

आनेगोंदि (रायचूर, मैसूर)

सन् १४०२, सस्कृत–कन्नड़

इस लेख मे राजा हरिहर के राज्यकाल मे वैशाख शु० ३ सोमवार, चित्रभानु संवत्सर के दिन मन्त्री बैच के पुत्र इरुगप दण्डनायक द्वारा कर्णाट मंडल के कुन्तल विषय में जिनमन्दिर के निर्माण का वर्णन है। उन के गुरु की परम्परा का भी वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी ६७८

१९३

जतारा (टीकमगढ, मध्यप्रदेश)

सं० १४७८ = सन् १४२१, संस्कृत–नागरी

नेमिनाथ मन्दिर की एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। मूलसंघ-बलात्कारगण-सरस्वतीगच्छ के किसी भट्टारक का इस में उल्लेख है। कार्तिक व. १४ सं० १४७८ यह इस की तिथि है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० सी १८९६

१९४

गोवा

शक १३४७–५५ = सन् १४२५–३३, संस्कृत–कन्नड

पुराने गोवा में सेंट फ्रांसिस द एसिसी की कन्वेन्ट के आँगन में पड़ी हुई शिला पर यह लेख है। विद्यानन्द स्वामी के शिष्य सिंहनंद्याचार्य के शिष्य हरियण सूरि का भाद्रपद ब० ७ बुधवार शक १३५४ परिधावी संवत्सर को समाधिमरण हुआ ऐसा इस में वर्णन है। सिंहनंद्याचार्य के शिष्य मुनियण्ण को बन्दवड की नेमिनाथबस्ति के लिए आषाढ शु० १ शक १३४७ क्रोधि संवत्सर को वागुरुंबे ग्राम दान दिया गया था तथा कार्तिक शु० (१) शक १३५५ परिधावी संवत्सर को अक्षय नामक ग्राम दान दिया गया था। विजयनगर के राजा देवराय २ के अंतर्गत लक्कण्प के पुत्र त्रियंबक का गोवा पर उस समय शासन चल रहा था। लेख में यह भी कहा है कि बन्दवाडि ग्राम पुरातन समय में श्रीपाल राजा द्वारा बसाया गया था तथा वहाँ मंग दंड के पुत्र विरुगप ने नेमितीर्थंकर का मन्दिर बनवाया था। इस का जीर्णोद्धार सिंहनंदि के उपदेश से किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी १९३

१९५–१९६

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १४९७ = सन् १४४०, संस्कृत–नागरी

किले में जैन मूर्तियो के समीप ये दो लेख हैं तथा उक्त वर्ष में मूर्तिस्थापना का उल्लेख करते है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०४-५

१९७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

स० १४९९ = सन् १४४२, संस्कृत–नागरी

यह लेख जैन मन्दिर मे रखी हुई एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस मे आगे की ओर तीर्थंकर श्रीधर्मनाथदेव यह नाम है तथा पीछे उक्त वर्ष मे मूलसघ के भ० विद्यानदि का नाम अकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१३

१९८

अलगूर (मैसूर)

शक (१३) ६६ = सन् १४४५, कन्नड

इस लेख में उक्त वर्ष मे आदिनाथमूर्ति की स्थापना का वर्णन है।

सा० इ० इ० २० पृ० ३७८

१९९-२००

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५०५ = सन् १४४८, संस्कृत-नागरी

किले मे जैन मूर्ति के समीप यह लेख है। गोपगिरि मे राजा डूगर-सिंह तोमर के राज्यकाल मे इस मूर्ति की स्थापना का इस मे वर्णन है। इसी वर्ष के यही के एक लेख मे कीर्तिसिंह के राज्यकाल तथा गुणभद्र मुनि का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०६, १५१०

२०१

केरवसे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १३७१ = सन् १४५०, कन्नड

केरवसे के वर्धमानस्वामी के मन्दिर मे प्रतिदिन दीप जलाने के लिए सजरसेट्टि को कुछ भूमि और ५ बारकूरु गद्याण दान दिया गया था। यह लेख श्रीकरण देवप्प सेनबोव के पुत्र पडरिदेव सेनबोव ने लिखा था। यह हिरेबस्ति मे रखी हुई एक शिला पर है। तत्कालीन शासक केरवसे व कारकल के वीरपाण्डय देवरस का नाम भी लेख मे है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२९

२०२-२०३

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५१० = सन् १४५३, संस्कृत-नागरी

क़िले मे जैन मूर्तियों के समीप ये दो लेख हैं। उक्त वर्ष में मूर्ति-स्थापना का इन मे निर्देश है। एक में गोपाचल में डूंगरेन्द्र के राज्य में

साधु माल्हा के पुत्र सं० देऊ के पुत्र सं० कर्मसीह तथा उस की बहिन साविरी का नाम अंकित है। दूसरे में काष्ठासंघ-माथुरान्वय के किसी पण्डित का तथा खेखा और हरिचन्द्र का नाम अकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०७-८

२०४

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५१४ = सन् १४५७, संस्कृत-नागरी

किले में जैन मूर्ति के समीप के इस लेख में उक्त वर्ष में डोंगरसिंह के राज्य मे मूलसंघबलात्कारगण के पद्मनन्दि तथा जिनचन्द्र भट्टारक के नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५११

२०५

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

सं० १५२२ = सन् १४६५, संस्कृत-नागरी

किले मे जैन मूर्ति के समीप के इस लेख मे कीर्तिसिंह के राज्य में मूलसंघ-बलात्कार गण के पद्मनंदि देव का तथा ऊकेशान्वय के महीदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५०९

२०६ से २१८

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

सं० १५२५ = सन् १४६८, संस्कृत-नागरी

क़िले में जैन मूर्तियों की उक्त वर्ष में स्थापना का निर्देश करने वाले १३ लेख मिले है। इन में एक में कीर्तिसिंह के राज्य में मूल संघ के गोलाराट वंश के किसी संघपति का नाम है। नौ लेखों में तिथि के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है। ग्यारहवें लेख में क्षेमकीर्ति तथा हेमकीर्ति के नाम मिलते है। बारहवें मे लेखक के रूप में चाटम के पुत्र चिद्रूप का नाम है। तेरहवें मे सं० हेमराज का नाम मिलता है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५१२ से १५१६, १५२३-२४, १५२२ तथा १५२५

२१९-२२०

उखलद (परभणी महाराष्ट्र)

सं० १५२६-७ = सन् १४७०-१, संस्कृत-नागरी

ये दो लेख जैन मन्दिर मे रखी हुई मूर्तियों के पादपीठों पर हैं। पहले में मूलसंघ के आचार्य सकलकीर्ति, भुवनकीर्ति, (धर्म) कीर्ति एवं हरदास का सं० १५२६ में उल्लेख है। यह शांतिनाथ की मूर्ति है। दूसरे लेख में सं० १५२७ में मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के पट्टशिष्य आचार्य विद्यानन्दि के उपदेश से सिंहपुर वंश के तेजा तथा उस की पत्नी तेजलदे द्वारा जिनबिंब स्थापना का वर्णन है। यह पीतल की चतुर्मुख मूर्ति है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१४-५

२२१

ग्वालियर (मध्य प्रदेश)

सं० १५२७ = सन् १४७०, संस्कृत-नागरी

किले में जैन मूर्ति के समीप का यह लेख है। उक्त वर्ष में मूलसंघ-बलात्कारगण कुन्दकुन्दान्वय के किसी आचार्य ने यह मूर्ति स्थापित की थी ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० ११६१-६२ शि० क्र० सी १५२६

२२२

देवगढ़ (झाँसी, उत्तर प्रदेश)

सं० १५२ (८) = सन् १४७१, संस्कृत-नागरी

यह सं० १५२(८) का मूर्तिलेख यहाँ के मन्दिर न० ४ मे मिला है। इसमे श्रीधनदेव का नाम मिलता है।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १३१

२२३-२२४

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५३१ = सन् १४७४, संस्कृत नागरी

किले मे जैन मूर्तियों के समीप उक्त वर्ष के दो लेख मिलते हैं। एक में जिनचन्द्र, रत्नकीर्ति, पद्मनंदि तथा सिंहकीर्ति इन आचार्यों के नाम हैं एवं दूसरे में श्रीमत्परमगम्भीर आदि मंगलाचरण है, शेष अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० ११६१-६२ शि० क्र० सी १५२७-२८

२२५

सतलखेडी (मन्दसौर, मध्यप्रदेश)

सं० १५३९ = सन् १४८३, संस्कृत-नागरी

यहाँ के जिनमन्दिर में यह लेख है। उक्त वर्ष मार्गशीर्ष व० ९ को सा० आहव के पुत्र संघवी (नाम खण्डित) द्वारा मन्दिर-निर्माण का इस मे वर्णन है। सूत्रधार का नाम अर्जुन बताया है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० सी १९७४

२२६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५४५ = सन् १४८९, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९४

२२७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १५४८ = सन् १४९२, संस्कृत-नागरी

यहाँ जैन मन्दिर में उक्त वर्ष में स्थापित ४१ मूर्तियाँ हैं। इनके पादपीठ लेखों मे प्रतिष्ठापक भ० जिनचन्द्र का नाम अंकित है। कुछ लेखों में अन्य नाम (स्थापनाकर्ता, राजा आदि) भी पाये जाते हैं।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २१७ से २५७

२२८

केरूर (बेलगाँव, मैसूर)

लिपि—१५वीं सदी की, कन्नड

जैन मन्दिर में पार्श्वनाथ मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इसमे निम्नलिखित ३ पंक्तियाँ है—

गुणभद्रदे(व)रु मूल-
संघ सेनगण पिंगल
संवत्सर—सेटि

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ४८७

२२९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५५८ = सन् १५०२, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ मे स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में उक्त वर्ष तथा मुणसिघ, जराजचंद एवं जीतराज के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८४

२३०

केरवसे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १४३३ = सन् १५१०, कन्नड

रामुसालर द्वारा वर्धमानस्वामी को वैशाख शु० १० गुरुवार शक १४३३ प्रमोद संवत्सर के दिन कुछ दान किये जाने का इस लेख में वर्णन है। यह लेख मूडबस्ति मे रखी शिला पर है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२८

२३१

मंकी (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १४३७ = सन् १५१४, कन्नड

यह लेख इम्मडि देवराज के समय का चैत्र शु० ८ रविवार शक १४३७ भावसंवत्सर का है। पद्मप्रभदेव के शिष्य मल्लप्प हेग्गडे द्वारा निर्मित अनन्ततीर्थंकर बसदि तथा चौबीस तीर्थंकर बसदि का इस में उल्लेख है। उक्त तिथि को पहली बसदि को कुछ भूमि दान दी गयी थी।

क० रि० इ० १९४०-४१ शि० क्र० ६२

२३२-२३३

खंबदकोणे (दक्षिण कनडा, मैसूर)

शक १४३८ = सन् १५१५, कन्नड

इन दो लेखों के अनुसार विजय नगर के अधीन बारकूरु राज्य के शासक रत्नप्प वोडेय के पुत्र विजयप्प वोडेय ने चन्द्रनाथ स्वामी के अमृत-पडि उत्सव के लिए २० वराह गद्याण दान दिया था, तथा पेनुकंडि के वीरसेनदेवाचार्य को ६० वराह गद्याण दान दिया था। तिथि मार्गशिर शु० १५ धातु संवत्सर शक १४३८ ऐसी बतायी है। ये दो शिलाएँ कल्लुतोडमे नामक खेत में हैं।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० बी ६२३-२४

२३४

मोळखोड (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १(४)३९ = सन् १५१६, कन्नड

यह लेख ज्येष्ठ शु० २ शनिवार शक १(४)३९ धातु संवत्सर का है। इस में देवरस द्वारा अंजुनायक को दिये गये विक्रय प्रमाणपत्र का वर्णन है तथा चौबीस तीर्थंकर बसदि को दिये गये कुछ दान का उल्लेख है।

क० रि० इ० १९४०-४१ शि० क्र० ६६

२३५

ग्वालियर (मध्यप्रदेश)

सं० १५८० = सन् १५२३, संस्कृत-नागरी

किले मे जैनमूर्ति के समीप के उक्त वर्ष के लेख में ढलधारी के सूत्रधार तथा साधु कसवल के नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५२०

२३६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५८१ = सन् १५२४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ में रखी हुई एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। उक्त वर्ष के अतिरिक्त अन्य विवरण अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८५

२३७

आगरा (उत्तर प्रदेश)

सं० १५९९ = सन १५४३, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक खण्डित जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। माघ शु० ५ बुधवार सं० १५९९ को बाथू तथा उसके परिवार ने इस मूर्ति की स्थापना की थी।

रि० इ० ए० १९६०-६१ शि० क्र० बी ६०१

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५१३ में भी सम्भवतः इसी लेख का वर्णन है यद्यपि यहाँ स्थापक का नाम नाथू तथा उदाई का पौत्र इस प्रकार अंकित है, तिथि वही है। इसके अनुसार यह पादपीठ प्रिन्सिपल, जैन कालेज, आगरा से प्राप्त हुआ था।

२३८–२३९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १५९९ = सन् १५४३, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ मे रखी हुई दो मूर्तियों के पादपीठों पर ये लेख हैं। एक में उक्त वर्ष तथा काष्ठासंघ का उल्लेख है। दूसरे में उक्त वर्ष मे काष्ठासंघ–पुष्करगण के भ० जससेन तथा (अग्र)वाल ज्ञाति के गर्ग-गोत्र के किसी गृहस्थ (नाम अस्पष्ट) का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८९, ३९१

२४०

जलोळ्ळी (उत्तर कनडा, मैसूर)

शक १४६७ = सन् १५४५, कन्नड

यह लेख माघ १३ रविवार शक १४६७ क्रोधी संवत्सर का है। गेरसोप्पे के कृष्ण भूपाल के राज्य में नागप्प सेट्टि द्वारा निर्मित पार्श्व-जिनालय का इस मे वर्णन है।

क० रि० इ० १९४०-४१ शि० क्र० ७०

२४१

चक्रनगर (इटावा, उत्तर प्रदेश)

सं० १६१७ = सन् १५६०, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। ज्येष्ठ शु० ५ सं० १६१७ यह इस की तिथि है। इस मे स्थापक के पिता का नाम मल्हा अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ४९०

२४२-२४३-२४४

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५०६ = सन् १५८४, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। फाल्गुन शु० २ शक १५०६ तारण संवत्सर यह स्थापना तिथि तथा मूलसंघ के भट्टारक धर्म-भूषण के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति के शिष्य—कीर्ति के नाम का इस में उल्लेख है। यहीं की एक नेमिनाथमूर्ति के पादपीठ पर मूलसंघ सरस्वतीगच्छ-

बलात्कारगण के भ० धर्मचन्द्र–धर्मभूषण–देवेंद्रकीर्ति–अजितकीर्ति इन आचार्यों के नाम अंकित हैं, स्थापनातिथि नही है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २६६-७

यही के एक अन्य मूर्तिलेख में धर्मभूषण के शिष्य देवेन्द्रकीर्ति के उपदेश से गामाजी द्वारा पार्श्वनाथ की मूर्ति की स्थापना का वर्णन है, इस में तिथि नही है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २६३

२४५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६४७ = सन् १५९०, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त वर्ष तथा भ० चन्द्रदेव का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९५

२४६

दुदही (झाँसी, उत्तर प्रदेश)

सं० १६४८ = सन् १५९१, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर में एक शिला पर यह लेख है। वैशाख व० ५ रविवार सं० १६४८ यह इसकी तिथि है। भ० ललितकीर्ति तथा कुछ यात्रियों के नाम इस में अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० सी ५१८

२४७-२४८

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १६(५)१ = सन् १५९५, संस्कृत-नागरी

ये लेख जिनमूर्तियों के पादपीठों पर हैं। पहले में मूलसंघ के वादिभूषण भट्टारक का नाम अंकित है। दूसरे में स० १६(५)१ में वादिभूषण के उपदेश से लखमा की पत्नी लखमादे द्वारा पार्श्वनाथ मूर्ति की स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी० २६४, २५८

२४९

सोनागिरि (दतिया, मध्य प्रदेश)

लिपि १६वीं सदी की, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० १३ की एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में कुंदकुंदान्वय तथा भुमनलाल ये नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १३९

२५०

खंडेला (सीकर, राजस्थान)

सं० १६(६) १ = सन् १६०४, संस्कृत-नागरी

इस लेख में मार्गशिर व० ५ गुरुवार स० १६(६)१ के दिन शान्तिनाथ मन्दिर के निर्माण का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ५९०

२५१

रेवासा (सीकर, राजस्थान)

सं० १६६१ = सन् १६०४, संस्कृत-नागरी

इस लेख में भ० जशकीर्ति के उपदेश से खंडेलवाल श्री कुम्भा द्वारा आदिनाथ मन्दिर में पद्मशिला की स्थापना का वर्णन है। कूर्मवंश के महाराज रायमल तथा मन्त्री देईदास के नाम भी अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९५९-६० शि० क्र० बी ५९३

२५२

सोनागिरि (दतिया, मध्य प्रदेश)

सं० १६६३ = सन् १६०६, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ मे स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में उक्त स्थापनावर्ष तथा भ० यशोनिधि का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८६

२५३-२५४

रामपुरा (मन्दसौर, मध्य प्रदेश)

सं० १६६४ = सन् १६०७, संस्कृत-नागरी

१ ओं नम. सिद्धेभ्य. । संवत

२ १६६४ वर्षे वसाप्य [वैशाख] मास-

३ शुक्लपक्षसप्तम्यां गुरौ पुष [प्य]-

४ नक्षत्रे एतस्मिन् दिने सं

५ गड्ड श्रीनाथु तस्य पुत्र
६ सं जोगा तस्य पुत्र सं
७ जीवा तस्य पुत्र संग-
८ ह्र श्रीपदारथ पा [थु]
९ ज्ञाता बघेरवाल
१० गात्र [तेन] सव्या वापा [पी] प्र-
११ तिष्ठा कृता सुभ [शुभं]
१२ भवतु सत्रधर· (सूत्रधार·)
१३ राभा ।।श्री

दूसरा लेख

१ (श्री) गणेशभारतीभ्यां नम· । नत्वा देवं विघ्नराजं गणेशं देवीं वाणीं दिव्यसिंहासनस्थां जीवासूनोर्द········(दशायां)········कोके (कल्पवृक्ष) ·· (।।१)····(श्रा)जितपादपद्मा. ।।

२ (सम) स्तसंदर्शितमोक्षमार्गा विद्वत्प्रिय पान्तु पदार्थकं ते ॥२॥ सार्द्धद्वादशजातयो निगदिता श्रेष्ठा विशां भूतले तन्मध्ये (प्र)थिता सुधर्मनिरता व ·· ·· धर्मे स्वकीये स्थिता मि-

३ (थ्यास्थावि) निवर्जितातिनिपुणा. पण्ये स्थितानां शुभे ॥३॥ नेत्रबाणेषु गोत्रेषु श्रेष्ठिगोत्र शुभं मत । तस्मिन् पदार्थको जात: सर्वगोत्रप्रकाशक ।।४।। त ··· ·· (प्र) दानाधिगतप्रतीति ।।

४ (स्या) पारदक्षो निजबंधुमुख्य: नाथू धनाढ्य: प्रथित: पृथिव्यां ॥५॥ तस्यात्मजोभूत्सु (हृदाप्त)····रत्नाकराच्छोतकर: कलाढ्य: । यथा जनानंद (कर:) ·· · (मुदग्र) कीर्ति. ॥६॥ आमदुर्गा–

५ धिपतिं प्रजानां दूरीकृताधिं सुनयेन दक्षं । प्रभु गुणाढ्यं समवाप्य शश्वद् धर्मार्थकामान् बुभुजेधिकश्री: ॥७॥ मचल. किल यो (ग) सांज्ञिकं ⋯अधिकारिपदे नियुक्त—

६ (वान्) निजकार्यक्षम (तां च) पाटवं ॥८॥ गूर्जरदेशाधिपतिः शकपो यं प्राप्य मेदपाटसंस्थितं । गतभी: पालयमान. शरणं यत्प्रतापसंज्ञिकं कृतवान् ॥९॥ ⋯नीथ. सुगुणाभिरामः यो

७ ⋯दशलक्षणेभूत् कृतप्रयत्नो निजधर्ममुख्ये ॥१०॥ दयापरः सत्यपर: कृतार्थः सत्पात्रदानेन सुगीतकीर्तिः । चैत्यालयं सद्गुरु-भक्तियुक्तो⋯॥११॥ जीवाभिधस्तत्तनयो

८ (ब) भूव स्वकीयधर्मेषु दृढप्रतीतिः । दयार्द्रभावो गुरुदेवभक्तो वंशाग्रणीर्बुद्धिमतां वरिष्ठः ॥१२॥ चैत्यालये वृद्धिकरं स्वकीये सदा शुभध्यानविधूतमोहं । ''रिकं भव्यगुणं चकार ॥१३॥

९ तदा श्रमात् प्राप्तसमस्तकामश्चतुर्विधं दानमदाद्य.लभ्य. । सत्पात्र-दानेन कृपायुतेन प्राप्नोति लोके पदवीं च गुर्वी ॥१४॥ तस्यात्मजौ द्वौ विनयोपपन्नौ ⋯ज्यायान् पदार्थोनुजनिश्च

१० नाथू दीर्घायुषौ तौ भवतां भवेस्मिन् ॥१५॥ श्रीमद्दुर्गनरेशस्य कृतैकसुकृतस्य च । वर्ण्यते तस्य राज्यं हि रामराज्योपमं शुभं ॥१६॥ ॥ श्रीमत्प्रतापसूनौ दुर्गनृपे भूपतिप्रवरे ।⋯ कुर्वति ज्ञात्वा⋯पुण्यकारिणो मनुजाः ॥१७॥

११ श्रीदुर्गभानु. किल पुत्रपौत्रैर्भोज्यात् सहस्रं शरदां नरेन्द्रः । पतिं यमासाद्य नरेन्द्ररत्नं राजन्वती भूमिरियं विभाति ॥१८॥ दूषणारिपुरप: कृतवान् यो यज्ञदानमिव(है)र्निजकीर्ति । सा⋯ लोकमार्ति वा अर्गलाविरहिता

१२ विपुलं वित् ॥१९॥ निजस्वामिपुरे रम्ये श्रीमद् दुर्गनरेश्वरः । शुभं सरोवरं चक्रे सर्वलोकसुखावहं ॥२०॥ नयेन जित्वा नृपतीन् बलाढ्यो नतांश्च चक्रे वशवर्तिनस्तान् । दिगंतराजांश्च दुराशयान् यो····देशान् विगतप्रभावान् ॥२१॥

१३ पद्माकरं कारितवान् हि प्राच्यां दिश्युज्जयिन्यां बहुसत्त्वजुष्टं । बध्वा नदीं पिंगलिकां धनानि श्रीदुर्गमानुर्वितरन् बहूनि ॥२२॥ कलत्रपुत्रद्विजवर्यसार्थैरुपेत्य तां पुण्यपिशाचमोक्षे । अचीकरद् दुर्गनृपस्तुलां यो हिर—

१४ ण्यदानं बहु चान्नदानं ॥२३॥ श्रीदुर्गभूपः किल दक्षिणस्यां सोहिल्लकं वारणदुर्निवारं । जित्वाहवे सैन्यपतींश्च हत्वा दिल्ली-श्वरं कीर्तिपरं चकार ॥२४॥ गूर्जरदेशाधिपतिः सुदुष्कर स्वं जय ध्रुवं मेने । वि–

१५ लोक्य दुर्गनृपतेर्गाशीर गजपुरस्मरं मरन ॥२५॥ गोसहस्रमहा-दान विधिवद्दीनवल्लभः । दूषणारिपुरे दुर्गो ददौ कल्पद्रुमोपम. ॥२६॥ मथो पुरी प्राप्य जगत्पवित्रां सूर्योपरागे हि ददौ महान्ति । दानानि चान्यानि त्रयो–

१६ दशानि श्रीदुर्गभूपो द्विजपुंगवेभ्यः ॥२७॥ क्षात्रं दयालुतां दानं विनयं धर्मरक्षणं । विज्ञानं विष्णुभक्ति च वर्णितुं तस्य कः क्षम. ॥२८॥ तस्य प्रभोर्दुर्गनराधिपस्य मान्याग्रणीर्प्राद्यगुणो वदान्यः । परोपकारेऽज—

१७ निधिः पदार्थः प्रीत्या जनानंदकरः कृपालु ॥२९॥ दयया दानमानाभ्यां नयेन प्रश्रयेण च । पदार्थ. प्राप्तसंकल्प. सर्वलोक-प्रियोभवत् ॥३०॥ (कृ)त्वाधिकार विपुले धने स्वे सेवापरं दुर्गनृपः पदार्थं । दिल्ली-

१८ इवशात्प्राप्तमिवोरूमानो देशाननेकान् बुभुजे तदात्तान् ॥३१॥
विश्रामभूमि. किल सज्जनानां पदारथः पुण्यनिधिः गुणज्ञः ।
समाश्रिताः सत्फलमाप्नुवन्ति निदाघतप्ता इव कल्पवृक्षं ॥३२॥
विविधमंत्रप—

१९ टु हि पदार्थकं सकलकार्यधुराधरणक्षमं । हृदि विचिंत्य सुधानि-
धिसंज्ञिकः सकलमंत्रिजनेष्वकरोद् विभुं ॥३३॥ श्रीमद्दुर्गनरेश्वरस्य
तनयश्चन्द्रान्वयद्योतकश्चन्द्रः क्षात्रगुणान्वितो निजजनानंदप्रदः
कांतिमान् ।

२० संग्रामे तुरतीं विजित्य सहसा म्लेच्छाधिपं दुस्सहं नीत्वा
दुंदुभिवाजिराजिमतनोत् कीर्ति जगद्विश्रुतां ॥३४॥ दिशि
मंत्र्यते यस्यां मानोर्भानुसहस्रकं । तस्यामेव तु चन्द्रेण
प्रतापैररयो जि—

२१ ताः ॥३५॥ समरभूमिगतः सुतरां बभौ नृपतिपूजितदुर्गतनूद्भवः ।
यव(न)सैन्यपतीनहनत् परान् विजयिवीरकुमारसमप्रभ.
॥३६॥ ईदृग्-विधाचन्द्रमसोधिकारं लब्ध्वा वितेने विपुलं
यशः स्वं । देवा (ल)—

२२ यं तीर्थकृतां च भक्तिं कुर्वन् पदार्थो दयया च दानं ॥३७॥
देवोत्सवं तस्य जिनालयस्य द्रष्टुं प्रतिष्ठावसरे हि संघः ।
सन्मानभोज्याद्यदुकूलवस्त्रैः समर्पितः सद्वचनैरिहाप्तः ॥३८॥
रथं विधायामर (या)—

२३ ....रूपं तत्रोपविश्यार्यजनै. पदार्थः । दानं ददत् पौरजनैः सहर्षैः
शनैर्ययौ दुर्गसरःसमीपे ॥३९॥ यात्रां विधायाशु जलस्य
दत्वा वस्त्राण्यनंतानि सुवासिनीभ्यः । पूगीफलानां निचयं
जनेभ्यो—

२४ ····तिं प्राविशदालयं स्वं ॥४०॥ वस्त्राष्टकं वर्गचतुष्टयेभ्यः प्रीत्या ददन्नित्यमवारितान्नं। कृत्वा शुभं मंडपमत्र होमं संपूज्य संघं विससर्ज पूर्णं ॥४१॥ जोवामूनुरकारयन्निजकुले भास्वत्—

२५ ···रथ्यासौधशतां गवाक्षरुचिरां शस्त्राकृतिं दीर्घिकां। दूरागतशर्मदां दृढशिलाबद्धां पुरात् पश्चिमे पूर्णां शीतजलेन भव्यरचनासोपानपंक्त्यन्वितां ॥४२॥ श्रीमद्विक्रमभूमिपस्य समयात् ष—

२६ ····न्मिते मासे राधसि वत्सरे गुरुयुते भास्वत्तिथौ चोज्वले। विप्रान् वेदविद. सुवर्ण···वस्त्रादिभिस्तोषयन् पूर्णीकृत्य सुदीर्घिकां च वितरन् वित्तं पदार्थाधिकं ॥४३॥ पेतासूनुः सूत्रधा (र)—

२७ (श्चकार) शस्त्राकारां दीर्घिकां रामदास.। शिल्पं तस्या वीक्ष्य शिल्पी मनोज्ञं कश्चि (च्चित्ते नादधात् शिल्प) गर्वं ॥४४॥ भारद्वाजकुलोद्भवो (द्विजवर.) श्रीकेशव पुण्यकृत् वेदव्याकरणागमार्थवि (द)—

२८ ···न सुधि ···॥४५॥ ···पारगः सुचरितो कौसल्यगोत्रे भवद् दे (व)—

२९ ···सौगतधर्मवेत्ता। स्वे ···

३० ···(शोभावहां) ॥ यस्य···

उपर्युक्त दो लेखो मे से पहला एक स्तम्भ पर तथा दूसरा एक सीढीदार कुँए की दीवाल में लगी हुई शिला पर है। दोनो में बघेरवाल जाति के श्रेष्ठिगोत्र के संगई नाथू के पुत्र जोगा के पुत्र जीवा के पुत्र पदार्थ द्वारा इस कुँए के निर्माण का वर्णन है। इस के शिल्पकार का नाम रामा या रामदास बताया है। दूसरे लेख मे नाथू के पुत्र जोगा का नामान्तर योग बताया है तथा अचल ने* उसे अधिकारिपद दिया ऐसा कहा है। मेवाड़ की सीमा पर योग की गुजरात के शकप (मुसलमान राजा) से मुठभेड़ हुई थी। योग ने दशलक्षण धर्म की साधना की तथा एक जिनमन्दिर बनवाया। उस के पुत्र जीवा के दान की और गुणो की बड़ी प्रशंसा की है। जीवा के पुत्र पदार्थ और नाथू हुए। इस के बाद राजा दुर्गभानु और उस के पुत्र चन्द्र की विस्तृत प्रशसा है। दुर्ग ने अपने नगर में एक सरोवर बनवाया था। उज्जयिनी के पूर्व मे पिंगलिका नदी पर बाँध बनवाया था तथा पिशाचमोक्ष तीर्थ पर तुलादान किया था। दिल्ली के बादशाह अकबर की ओर से गुजरात के सुलतान से लड कर अहिल्लक किला जीता था तथा एक हज़ार गायें दान दी थी। मथुरा की यात्रा कर बहुत से दान दिये थे। इस दुर्गराज ने पदार्थ को अपना मन्त्री नियुक्त किया था। दुर्ग के पुत्र चन्द्र ने पदार्थ को मुख्य मन्त्री बनाया। तदनन्तर पदार्थ द्वारा की गयी यात्रा, दान, होम, पूजा आदि गतिविधियो की चर्चा है तथा इस कुँए का निर्माण पूरा होने का वर्णन है। यह कुँआ अभी भी पाथू शाह की बावड़ी कहलाता है (पाथू का ही संस्कृत मे पदार्थ यह रूप प्रयुक्त किया गया है)।

ए० इं० ३६, पृ० १२१-३०

---

* ये रामपुरा के चन्द्रावत राजा अचलदास थे। इन के पुत्र प्रतापसिंह तथा प्रतापसिंह के पुत्र दुर्गभानु हुए।

२५५

पैरिस संग्रहालय (मूल स्थान अज्ञात)

सं० १६६६ = सन् १६१०, संस्कृत-नागरी

पैरिस के म्यूजी गिमे से प्राप्त एक फोटोग्राफ क्र० एम जी २१०८८ में कांसे की जिनमूर्ति दिखायी गयी है जो उक्त वर्ष मे स्थापित की गयी थी।

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० बी ५४४

२५६–२५७

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

सं० १६६९ = सन् १६१३ तथा शक १५३८ = सन् १६१६

संस्कृत-नागरी

इस लेख में काष्ठासघ के भट्टारक जसकीर्ति द्वारा फाल्गुन व. (१०) गुरुवार सं० १६६९ में एक जिनमूर्ति को स्थापना का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २५९

यही के एक अन्य मूर्तिलेख मे फाल्गुन व. २ शक १५३८ नल संवत्सर यह स्थापना की तिथि तथा बलात्कारगण सरस्वतीगच्छ के विशालकीर्ति का नाम अकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २६८

२५८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६७० = सन् १६१४, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ५७ में स्थित पार्श्वनाथमूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस में पुष्करगच्छ-ऋषभसेनगणधरान्वय के भ० विजयसेन के शिष्य भ० लक्ष्मीसेन तथा रावतचंद व उस की पत्नी केसरबाई के नाम अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३७४

२५९

राणोद (शिवपुरी, मध्यप्रदेश)

सं० १६७४ = सन् १६१८, संस्कृत-नागरी

बाराखम्भा नामक स्तम्भ पर यह लेख है। इस में मूलसंघ-सरस्वतीगच्छ के जसकीर्ति व ललितकीर्ति का उल्लेख है। जहाँगीर के राज्य का भी उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६१-६२ शि० क्र० सी १५९७

२६०–२६१–२६२

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५४१ = सन् १६२०, संस्कृत-नागरी

जैन मन्दिर में स्थित मूर्तियों के पादपीठो पर ये लेख हैं। एक लेख में उक्त वर्ष में प्रतिष्ठापक विशालकीर्ति का नाम अंकित है। दूसरे लेख

मे भी उक्त वर्ष मे विशाल्कीर्ति का नाम है, साथ ही उन की परम्परा मूलसंघ-बलात्कारगण-सरस्वतीगच्छ-कुन्दकुन्दाचार्यान्वय का उल्लेख भी है। तीसरे लेख मे भी उक्त समय तथा उन्ही का नाम अंकित है, साथ में उन के गुरु का नाम देवेन्द्रकीर्ति बताया है तथा इस मूर्ति की स्थापना कोंकण से आये हुए नागश्रेष्ठि की ओर से की गयी थी ऐसा बताया है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २६८, २६९, २७०

२६३–२६४

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५४५ = सन् १६२३, संस्कृत-नागरी

यह लेख पीतल की एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में उक्त वर्ष मे महाताजी व उन की पत्नी जीवाईका नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७१

यही के इसी वर्ष के एक अन्य लेख में ज्येष्ठ शु० १४ शक १५४५ सं० १६८० रुधिरोद्गारी सवत्सर यह स्थापना तिथि तथा मूलसंघ के भ० गुणभद्र के शिष्य शरवण की पत्नी सान का का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी २७६

२६५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १६८(०) = सन् १६२४, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में ओर्छा के बुन्देल राजा वीरसिंघदेव के पुत्र जुगराज के राज्य में

ललितकीर्ति के शिष्य धर्मकीर्ति के उपदेश से जगजीवन द्वारा इस मूर्ति की स्थापना का वर्णन है। संवत् निर्देश में अन्तिम अंक अस्पष्ट है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३९०

२६६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७०१ = सन् १६४४, संस्कृत-नागरी

१ ब्र० श्री मंगलदासनी पादुका

२ मंडलाचार्य श्री केशवसेनगुरुभ्यो नमः पादुका

३ भं० श्रीविश्वकीर्तिनी पादुका

४ सं० १७०१ वर्षे ज्येष्ठमासे कृष्ण···

काष्ठासंघे नंदीतटगच्छे विद्यागणे भ० श्रीरामसेनान्वये तदनुक्रमे

भ० श्रीरत्नभूषण तत्सिष्य····

भ० श्रीविश्वकीर्ति नित्यं प्रणमति

सोनागिरि पहाडी पर मन्दिर क्र० ३४ के सामने एक छोटी सी छत्री में तीन चरण पादुकाएँ स्थापित है जिन पर उपर्युक्त संक्षिप्त लेख खुदे हैं। तात्पर्य मूल लेखों से स्पष्ट ही है। यह विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के समय अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६३ में भी इस का सारांश मिलता है।

२६७-२६८

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५६६ तथा १५७६ = सन् १६४४ तथा १६५४, संस्कृत-नागरी

यह लेख नेमिनाथमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में मूलसंघ के भट्टारक धर्मचन्द्र—धर्मभूषण—विशालकीर्ति—अजितकीर्ति इन आचार्यों की परम्परा बतायी है। मूर्ति की स्थापना अजितकीर्ति के शिष्य तुकश्रेष्ठी ने शक १५७६ जय संवत्सर में की थी।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७३

यहीं के एक अन्य मूर्तिलेख में शक १५६(६) यह स्थापनावर्ष तथा मूलसंघ के अजितकीर्ति का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी २७७

२६९

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७०७ = सन् १६५१, संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है। इस मे उक्त वर्ष मे भ० विश्वभूषण के उपदेश से वत्सगोत्र के पदमसी के पुत्र श्यामदास द्वारा पार्श्वनाथमूर्ति को स्थापना का उल्लेख है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३८३

२७०

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १५८९ = सन् १६६७, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है । वैशाख शु० ५ शक १५८९ प्लवंग संवत्सर यह स्थापनातिथि तथा मूलसंघ यह शब्द इस में अंकित है ।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७४

२७१

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७४५ = सन् १६८८, संस्कृत-नागरी

यह लेख मन्दिर नं० १७ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है । उक्त स्थापनावर्ष के अतिरिक्त इस का अन्य विवरण प्राप्त नही है ।

रि इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १४१

२७२

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७४७ = सन् १६९० संस्कृत-नागरी

श्रीश्रमणाचलस्थचंद्रप्रभाय नमः संवत्सरे १७४७ श्रावणशुक्ल ८ श्रीमहाराजकोमार श्रीदिमान छत्रसालजूदेव श्रीमहाराजकोमार श्रीराजा उदीत सिंहजू देव राज्योदये सेवाधिष्ठित श्रीगोपालमणिजू तत्समए श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदान्वये श्रीभट्टारकजिच्छ्री-

जगद्भूषणजू देव तत्पट्टे श्रीभट्टारकविश्वभूषणदेवेन मंदिरनिर्मापणं कृतं श्रीरस्तु श्रीकल्यानमस्तु श्री

जै कोई वांचै तिनकौ धर्मवृद्धि होय

उपर्युक्त लेख सोनागिरि की तलहटी के मन्दिर क्र० ९ के प्रवेश-द्वार पर लगी हुई शिलापट्टिका पर खुदा है। तात्पर्य मूल लेख से स्पष्ट ही है। यह विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४०८ में भी इस का सारांश मिलता है।

२७३

उखलद (परभणी, महाराष्ट्र)

शक १६२२ = सन् १७००, संस्कृत-नागरी

यह लेख एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। फाल्गुन ब० ३ शक १६२२ विक्रम संवत्सर यह स्थापनातिथि तथा मूलसंघ यह शब्द इस में अंकित है।

र इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी २७५

२७४ से २७८

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १७६० से १८३६ = सन् १७०४ से १७८०, संस्कृत-नागरी

ये पाँच लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरो मे प्राप्त हुए हैं। इन का विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० ५१ मे है। इस मे सं० १७६० में धर्मनाथ मन्दिर की प्रतिष्ठा का वर्णन है। यह मन्दिर मणोराम व

रुक्मावती के पुत्र लाला वासुदेव ने बनवाया था। प्रतिष्ठा के सम्बन्ध में भ० कुमारसेन व देवसेन के नाम भी अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी० ३६८

(२) यह लेख मन्दिर नं० ४६ में है। इस मन्दिर का निर्माण मूल-संघबलात्कारगण के भ० वसुदेवकीर्ति के उपदेश से पं० बालकृष्ण द्वारा सं० १८१२ में किया गया था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६६

(३) यह लेख मन्दिर नं० १५ में है। दतिया के बुन्देल राजा शत्रुजीत के राज्य में इस मन्दिर का निर्माण हुआ था। इस में तीन तिथियाँ दी है—सं० १८१९ में नीव खोदी गयी, सं० १८२५ में प्रतिष्ठा हुई थी तथा पूरा काम सं० १८८३ मे पूर्ण हुआ था। लेख में भ० महेन्द्रभूषण, जिनेन्द्रभूषण व आ० देवेन्द्रकीर्ति के नाम भी उल्लिखित हैं। निर्माणकार्य घोम्हानगर के शिल्पकार मटरू ने सम्पन्न किया था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ४१३

(४) यह लेख मन्दिर नं० ७६ में स्थित एक जिनमूर्ति के पादपीठ पर है। इस में स्थापना वर्ष सं० १८२८ तथा स्थापक देवेश का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३८२

(५) यह लेख मन्दिर नं० ५० में है। बुन्देलखण्ड में दिलीपनगर (दतिया) के राजा इन्द्रजीत के पुत्र छत्रजीत के राज्य मे नोरोदा निवासी बोटेराम ने भ० देवेन्द्रभूषण के उपदेश से सं० १८३६ में एक जिनमूर्ति स्थापित की ऐसा इस मे कहा गया है। मूर्ति के शिल्पकार का नाम घासी था।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६७

२७९

सेमनवाड़ी (बेलगाँव, मैसूर)

शक १७१५ = सन् १७९३, कन्नड

कार्तिक शु० ४ गुरुवार शक १७१५ प्रमादि संवत्सर। इस तिथि के इस लेख में जिनसेनभट्टारक का नाम दिया है। जिनमन्दिर के गोपुर में रखी हुई मूर्ति के पादपीठ पर यह लेख है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी ३५०

२८०

कोरोची (कोल्हापुर, महाराष्ट्र)

संस्कृत-कन्नड

शक १७२० तथा १७४२ = सन् १७९८ तथा १८२०

रायप्प व बन्धु रेवप्प द्वारा एक जिनमन्दिर के निर्माण व पार्श्वनाथ-मूर्ति की स्थापना का इस लेख मे वर्णन है। इस में दो शकवर्ष बताये हैं—१७२० तथा १७४२।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ७७८

२८१ से २८४

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८५५ = सन् १७९९, संस्कृत-नागरी

उक्त वर्ष के ये चार लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरो में प्राप्त हुए हैं। इन का विवरण इस प्रकार है—

(१) मन्दिर नं० ४ व ५ के बीच चौबोस तीर्थंकरों के चरणों का एक शिल्पांकित पट है उस पर यह लेख है। इस मे भ० राजेन्द्रभूषण के बन्धु सुरेन्द्रकीर्ति की शिष्या वसुमती का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६०

(२) यह लेख मन्दिर नं० ५८ में है। दतिया के राजा छत्रजीत के राज्यकाल में बलवन्तनगर निवासी परमानन्द व प्रतापकुँवरि के पुत्र लाला देवकीनन्दन, भगवानदास, मुकुन्दलाल व रामप्रसाद द्वारा आदिनाथ, पार्श्वनाथ व महावीर के मन्दिरों का निर्माण किया गया था। प्रतिष्ठा भ० महेन्द्रकीर्ति द्वारा सम्पन्न हुई थी।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७५

(३) यह लेख मन्दिर नं० ९ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस में भ० जिनेन्द्रभूषण के पट्टधर भ० महेन्द्रभूषण तथा ब्र० हर्षसागर के नाम अंकित हैं।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ४०५

(४) यह लेख मन्दिर नं० ८ में स्थित एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस मे मूलसंघ बलात्कारगण के भ० जिनेन्द्रभूषण व महेन्द्रभूषण के नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी० १३७

२८५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८६८ = सन् १८११, संस्कृत-हिन्दी-नागरी

श्रीमच्चन्द्रप्रभाय नमो नम.। संवत् १८६८ मिती माघ सुदि ५ श्रीमहाराजाधिराज श्रीराउराजा पारीछत बहादुरजूदेवस्य राज्योदये

श्रीमूलसंघे बलात्कारगणे सरस्वतीगच्छे श्रीकुंदकुंदाचार्यान्वये श्रीगोपाचलपट्टे भट्टारकजी श्रीविश्वभूषणजी तत्पट्टे श्रीसुरेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीलक्ष्मीभूषणजी तत्पट्टे श्रीमुनींद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीदेवेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीनरेंद्रभूषणजी तत्पट्टे श्रीसुरेंद्रभूषण विद्यमाने श्रीभट्टारक देवेंद्रभूषणस्य गुरुभ्राता मंडलाचार्यजी श्रीविजयकीर्तिजी तेन मंदिरजीर्णोद्धारेण पुनर्निर्मापणं कृत तच्छिष्यो पंडित परमसुखजी पंडित भागीरथजी चि० हीरानंद मंघराजादि मंदिरस्य नित्य सेवां कुर्वंतु श्रीरस्तु श्रीकल्याणमस्तु अपरं च १८६३ की सालमैं तौ मंदिर को नीम लगी अर संवत १८६६ की सालमै रथयात्रा प्राणप्रतिष्ठा भई अर स० १८६८ की सालमैं मंदिर पूर्ण बनि गओ जै कोइ बाचै तिनिकौ धर्मवृद्धि आशीर्वाद यथायोग्यम् श्री श्री श्री श्री श्री

उपर्युक्त लेख सोनागिरि की तलहटी के मन्दिर क्र० ९ के द्वार पर लगी हुई शिलापट्टिका पर खुदा है। संवत् १८६३ से १८६८ तक रावराजा पारीछत (परीक्षित) बहादुर के राज्यकाल में भट्टारक सुरेन्द्रभूषण के कार्यकाल मे आचार्य विजयकीर्ति द्वारा इस मन्दिर का जीर्णोद्धार किया गया था। उन के शिष्य पण्डित परमसुख, भागीरथ, हीरानन्द, मेघराज आदि थे। उपर्युक्त विवरण प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर ता० ६-६-६९ को अंकित किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४०९ में भी इस का साराश दिया है।

२८६ से २९२

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८७३ से १८९०=सन् १८१६ से १८३३, संस्कृत-नागरी

ये सात लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरों में मिले है। इन का विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० ३४ में है। दतिया के बुन्देल राजा पारीछत के राज्य में सं० १८७३ मे भ० देवेन्द्रभूषण के शिष्य विजयकीर्ति तथा पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से बलवन्तनगर निवासी ठकुरो बुलाखीदास ने ऋषभदेवमूर्ति की स्थापना की तथा इस मूर्ति के शिल्पी का नाम नोरैना था ऐसा इस मे वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ३६४

(२) यह लेख मन्दिर नं० ५७ मे है। राजा पारीछत के राज्य में पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से लाला लछमीचन्द द्वारा सं० १८८३ मे मन्दिर का जीर्णोद्धार किया गया था तथा मणोराम बन्धु चम्पाराम ने यहाँ की यात्रा की थी ऐसा इस मे वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७१

(३) यह लेख मन्दिर नं० २३ में है। इस मे सं० १८८४ में मूलसंघ के भ० सुरेन्द्रभूषण तथा चन्देरी निवासी खंडेलवाल सभासिंघ के नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी० १४४

(४) यह लेख मन्दिर न० ३७ मे है तथा ऊपर के लेख जैसा ही है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४७

(५) यह लेख मन्दिर नं० ७६ मे है। इस में सं० १८८८ तथा गोलानाथ यह शब्द अंकित है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४००

(६) यह लेख मन्दिर नं० ७७ के सामने चरणपादुका के पास है। सं० १८९० मे मण्डलाचार्य विजयकीर्ति के शिष्य हीरानन्द, मेघराज, परमसुख, भागीरथ आदि के नामो का इस मे उल्लेख है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ४०२

(७) यह लेख मन्दिर नं० ४३ मे है। राजा पारीछत के राज्य मे पं० परमसुख व भागीरथ के उपदेश से बलवन्तनगर के चौधरी कल्याणसाहि द्वारा सं० १८९० में मन्दिर निर्माण का इस में वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६५

२९३-२९४-२९५

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

[सं०] १८९० = सन् १८३३, सस्कृत-नागरी

श्रीमट्टारकमूलसंघतिलके श्रीकुंदकुंदान्वये श्रीगोपाचलपट्टके गण-बलात्कारे हि वागच्छके आकाशे नवनागचन्द्रमिलिते सोमे सिते कार्तिके मुनितिथ्यां च सुरेन्द्रभूषणयते. संस्थापिते पादुके तेनैव कथिता सद्धर्मवृद्धिः श्रेयस्सुधा।

उक्त लेख सोनागिरि के तलहटी के मन्दिर क्र० १२ के आँगन में स्थापित चरणपादुकाओ के चारो ओर वृत्ताकार दो पंक्तियों में है। इस में कार्तिक शु० ७ सोमवार, १८९० (जो संवत् होना चाहिए) के दिन मूलसंघ-कुन्दकुन्दान्वय बलात्कारगण-वागच्छ-गोपाचलपट्ट के सुरेन्द्रभूषण यति की पादुकाओं की स्थापना का उल्लेख है। इन पादुकाओं के समीप दो अन्य छत्रियो में भी चरणपादुकाएँ हैं जिन पर भ० हरेन्द्रभूषण तथा

भ० जिनेन्द्रभूषण के नाम पढे जा सकते हैं किन्तु लेखो का अन्य भाग अस्पष्ट है। उक्त विवरण ता० ६-६-६९ को प्रत्यक्ष दर्शन के अवसर पर अंकित किया गया था। वर्तमान भट्टारक चन्द्रभूषणजी के कथनानुसार उन के पूर्व के पट्टाधिकारी जिनेन्द्रभूषण के देहान्त की तिथि सं० २००० तथा उन के पूर्ववर्ती भट्टारक हरेन्द्रभूषण की देहान्ततिथि सं० १९८८ थी। भ० हरेन्द्रभूषण सं० १९४५ मे पट्टारूढ हुए थे।

प्रथम (सं० १८९० के) लेख का सारांश
रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४११ में भी मिलता है।

२९६ से ३०६

सोनागिरि (दतिया, मध्यप्रदेश)

सं० १८९९ से १९४५ = सन् १८४३ से १८८९

संस्कृत-नागरी

ये ग्यारह लेख यहाँ के विभिन्न मन्दिरो में प्राप्त हुए हैं। विवरण इस प्रकार है—

(१) यह लेख मन्दिर नं० १३ में है। दतिया के बुन्देल राजा विजयबहादुर के राज्य मे स० १८९९ में बलवन्तनगर के नन्दकिशोर, मणीराम, भोलानाथ और परिवार द्वारा इस मन्दिर का निर्माण किया गया था।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४१२

(२) यह लेख मन्दिर नं० ७६ की एक मूर्ति के पादपीठ पर है। इस मे बलात्कारगण के गोपाचलपट्ट के भ० जिनेन्द्रभूषण, महेन्द्रभूषण व

राजेन्द्रभूषण के नाम अंकित हैं तथा सं० १९१३ यह मूर्तिस्थापना का वर्ष बताया है।

उपर्युक्त शि० क्र० बी ३९०

(३) यह लेख मन्दिर नं० ५२ मे है। इस में सं० १९१७ में ललतपुर के रामचन्द्र का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३६९

(४) यह लेख मन्दिर न० ६५ व ६६ के बीच चरणपादुका के पास है। स० १९१८ के अतिरिक्त इस का अन्य विवरण अस्पष्ट है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७६

(५) यह लेख मन्दिर न० १८ में है। स० १९२३ मे भ० चारुचन्द्रभूषण तथा कोलारस निवासी अग्रवाल मीतलगोत्रीय चौधरी रामकिसन, बन्धु लालीराम तथा ईश्वरलाल के नाम इस में अंकित हैं।

रि० इ० ए० १९६३-६४ शि० क्र० बी १४२

(६) यह लेख मन्दिर न० २५ मे है। मूलसंघ-कुन्दकुन्दान्वय के भ० राजेन्द्रभूषण तथा लम्बकंचुक अन्वय के उदयराज बन्धु खड्गसेन के नाम तथा सं० १९२५ यह स्थापना वर्ष इस मे अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४६

(७) यह लेख मन्दिर नं० २३ मे है। मूलसंघ-सेनगण के भ० लक्ष्मीसेन के उपदेश से स० १९३० मे खंडेलवाल सेठ सुपुण्यचन्द्र व पत्नी केसरबाई द्वारा जिनमूर्ति स्थापना का इस मे वर्णन है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १४५

(८) यह लेख मन्दिर न० ६ में है। इस का तात्पर्य ऊपर के लेख जैसा ही है (सिर्फ सुपुण्यचद्र के स्थान में चन्द इतना ही अंश पढ़ा गया है)।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी १३८

(९) यह लेख मन्दिर नं० ९ मे है। सन् १८७३ व सन् १८७८ मे सोनागिरि पहाडी पर मन्दिर निर्माण के अधिकार के बारे में भ० शीलेन्द्रभूषण व भ० चारुचन्द्रभूषण में कुछ विवाद चला था उस का राजा भवानीसिंह द्वारा निपटारा किया गया ऐसा इस में वर्णन है।

रि० इ० ए० १९६२-६३ शि० क्र० बी ४१०

(१०) यह लेख मन्दिर न० ७५ मे है। इस मे सं० १९३४ में भ० चारुचन्द्रभूषण तथा फलटण ग्राम के बालचन्द नानचन्द का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३७९

(११) मन्दिर नं० ४ के समीप चरणपादुका के पास यह लेख है। इस में सं० १९४५ मे मूल संघ बलात्कारगण के गोपाचल पट्ट के भ० चारुचन्द्रभूषण का नाम अंकित है।

उपर्युक्त, शि० क्र० बी ३५९

अनिश्चित समय के लेख

३०७

डीग दरवाजा (मथुरा, उत्तरप्रदेश)

प्राकृत-ब्राह्मी

यह एक अर्हत् प्रतिमा का पादपीठ लेख है। अधिक विवरण प्राप्त नही है।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० बी ५९३

३०८

मट्टेवाड (वरंगल, आन्ध्र)

संस्कृत-कन्नड़

इस लेख मे मूलसंघ-कोण्डकुन्दान्वय के त्रिभुवनचन्द्र भट्टारक के समाधिमरण का वर्णन है। यह शिला भोगेश्वर मन्दिर में पडी है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० बी १२२

३०९

मद्रास

तमिल

इस ताम्रपत्र मे शेलेट्टि कुडियन् द्वारा इरुमुडिशोळपुरम के नगरत्तार से खरीदी भूमि पर पल्लि (जिन मन्दिर) के निर्माण का वर्णन है। उंबलनाडु तथा पुरंकरबैनाडु के अन्तर्गत दनमलिप्पूंडि की कुछ भूमि मन्दिरनिर्माता को खेती के लिए दी गयी थी। सुन्दरशोलपेरुबल्लि के लिए पल्लिच्छन्दम के रूप मे नन्दिसंघ के मौनिदेवर उपनाम संदणंदि तथा ऋषि व आर्यिकाओ के लिए दान देने हेतु कुछ भूमि अर्पित की गयी थी।

रि० इ० ए० ६१-६२ शि० क्र० ए० २९
ट्रैन्जेक्शन्स ऑफ दि आर्कि० सोसाइटी ऑफ
साउथ इंडिया १९५८-५९- पृ० ८४ पर प्रकाशित।

३१० से ३६९

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश) संस्कृत-नागरी

यहाँ के जैन मन्दिरो में भग्न पाषाणखण्डों पर निम्नलिखित शब्द पढ़े गये हैं। अधूरे और अस्पष्ट होने से इन के समय का तथा उद्देश्य का निश्चय नही होता तथापि ये मूर्तिस्थापकों तथा यात्रियो के नाम प्रतीत होते है। लेखों का विवरण इस प्रकार है—

मन्दिर नं० १ छिचपइ

मन्दिर नं० ३ देवं चेल्ली प्रणमति

,, ब्रह्मचा (रि) वाव: प्रणमति

,, पंडित शुभक (र)

,, —रदेव: पंडित ला ···का परमश्री सह····जी

,, धाहली

मन्दिर नं० ४ भा(व)णइदि

,, मामूथी तिणि प्रणमति

,, प्रणमति···जाटी प्रणमति

,, नयकीर्ति शिष्य गुणचन्द्र

,, राजस्य

,, कारा (पित.)

,, पुनमोद्र

मन्दिर नं० ११ सिंहान्वय के माधवसिंह, अजितसिंह तथा इन के शिष्य

,, श्री(भ) मांसीच पणी(बु)

मन्दिर नं० १२ माणिक्यनंदि के शिष्य रुद्रनंदि के शिष्य माघनंदि-ज्ञानशिलाक्षर के रचयिता

मन्दिर नं० १३ वीतचन्द्र, त्रिभुवनकीर्ति, कीर्तिकौमुदीपुर
,, सित्तिचाभुख
,, श्रमणमद्र:
,, श्रीविशा-कीर्ति
,, श्रीजसकीर्ति मट्टारक

मन्दिर न० १४ श्रीदेवचन्द्र पंचशिश्विक
,, वोन्दसेण्ड
,, देवकीर्ति

मन्दिर न० १५ पंचणाम
,, सधाकमिदं
,, घटपिद्
,, पद्लपूतु अचु
,, पुर्वापुषण्य
,, शिष्य वीरचन्द्र
,, सामज
,, वुधु
,, रिवा

मन्दिर न० १६ वो
,, मोतद्
,, अर्जिका सोना प्रणमति
,, पंडित माधनदिनां शिष्य पंडित पद्मनंदि प्रणमति
,, खोदा धनपनारितु सत्ती
,, आमदेव
,, अर्जिष्माळि
,, पं लक्षमनंदि, पं० श्रीचन्द्र, पं०ईशानंदि

मन्दिर नं० १६ हविचन्द्र
,, अर्जिका सिरिमा प्रणमति चेल्ली मोता
,, कलः प्रणमति
,, अर्जिका पद्मश्री प्रणमति नित्यं चेल्ली संजमश्री ···
रत्नश्री, ललितश्री, संजमश्री, जयश्री

मन्दिर नं० १७ गहुं

मन्दिर नं० १९ देशीगण के आचार्य
,, जिनयतिः प्रणमति
,, दिसरम
,, श्रीधीरणंदि

मन्दिर नं० २० उसदेविभार्यी, उदयनंदि, त्रिभुवनचन्द्र
,, ···कनदि
,, श्रीमोनसाह मोपति प्रणम्यति
,, आचार्य श्रीवीर (चन्द्र) के शिष्य श्री(त्रि)भुवनकीर्ति
,, विवे

मन्दिर नं० २१ श्रीगुणनंदि पंडित(ऐसे दो लेख हैं)
,, लोकनदि शिष्य गुणनदि पंडित (,,)
,, लालसस्य
,, रोदलु····सवरी
,, पद्माकरदेव
,, रुद्दु·····वना
,, वल्लभधज्य
,, उघु···लक्ष्मी····वदितु

मन्दिर नं० २२ श्रीमाल्वव नगराट

मन्दिर नं० २८ रामचन्द्र पंडित, सहस्त्रकीर्ति पंडित के शिष्य माधवचंद्र

मन्दिर नं० ३० श्री सहस्त्रकीर्ति पंडित
बाहरी दीवाल श्रीनेमिदेव पंडित
,, श्री देवेंद्र पंडित, वासना (?) चन्द्र के शिष्य

रि० इ० ए० १९५६-५७ शि० क्र० सी १२४-५, १२७-८,१३०,१३२, १३४ से १३८, १४१ से १७३, १७५, १७९ से १८२, १८४ से १८६, १८८, १९० से २०३, २०५, २१२ और २१३। क्र० १२९, १३१, १३३, १४०, १७६-८ १८७ और २०६-७ अस्पष्ट बताये गये है।

३७० से ३७५

देवगढ़ (झाँसी, उत्तरप्रदेश)

संस्कृत-नागरी

यहाँ के मन्दिर न० १९ मे सरस्वती मूर्ति के पादपीपठ पर एक लेख है। इस मे चन्देरी के राजा दुर्जनसिंह का तथा मूर्ति की स्थापना करने वाले त्रिभुवनकीर्ति की गुरुपरम्परा का वर्णन है।

रि० इ० ए० १९५८-५९ शि० क्र० सी ४१७

यही के मन्दिर न० १४ मे प्राप्त एक लेख मे चन्दमदेव की पत्नी के सहगमन का वर्णन है तथा मन्दिर न० ७ के एक लेख मे महाराजकुमार तेजसिंह का नाम अंकित है।

रि० इ० ए० १९५९-६०, शि० क्र० सी ५१५, ५१३

[क्र० ५०९ से ५१२ तक के यहाँ के लेख अस्पष्ट बताये गये हैं तथा ५१७ मे यात्रियो के नाम है ऐसा कहा गया है।]

यही के मन्दिर न० २५ के एक पाषाणखण्ड पर साढा यह नाम पढा गया है। मन्दिर न० २७ मे निम्नलिखित शब्द पढ़े गये है—(१) साहण (२) दवणदि (३) देव इव सुगुण सोढो दर्सनं लहे सेढे। मन्दिर नं० २८ में पढे गये अक्षर इस प्रकार हैं—रभ · पजु सुहाणूसियता।

रि० इ० ए० १९५७-५८ शि० क्र० सी ३०७, ३०९-१०



नाम सूची

(सन्दर्भ पृष्ठों के हैं)

[अ]

[द]

[म]

[ल]

[व]

[ह]



MĀṆIKACHANDRA D. J. GRANTHAMĀLĀ

* The Serial Numbers marked with asterisk are out of print

*1 **Laghīyastraya-ādi-saṁgrahaḥ** : This vol. contains four small works : 1) *Laghīyastrayam* of Akalaṅkadeva (*c* 7th century A. D.), a small Prakaraṇa dealing with *pramāṇa*, *naya* and *pravacana*. Akalaṅka is an eminent logician who deserves to be remembered along with Dharmakīrti and others. His works are very important for a student of Indian logic. Here the text is presented with the Sk. commentary of Abhayacandrasūri. 2) *Svarūpasambodhana* attributed to Akalaṅka, a short yet brilliant exposition of *ātman* in 25 verses 3-4) *Laghu-Sarvajña-siddhih* and *Bṛhat-Sarvajña-siddhih* of Anantakīrti. These two texts discuss the Jaina doctrine of Sarvajñatā. Edited with some introductory notes in Sk. on Akalaṅka, Abhayacandra and Anantakīrti by PT. KALLAPPA BHARAMAPPA NITAVE, Bombay Samvata 1972, Crown pp. 8-204, Price As. 6/-.

*2. **Sāgāra-dharmāmṛtam** of Āśādhara : Āśādhara is a voluminous writer of the 13th century A. D., with many Sanskrit works on different subjects to his credit. This is the first part of his *Dharmāmṛta* with his own commentary in Sk. dealing with the duties of a layman. PT. NATHURAM PREMI, adds an introductory note on Āśādhara and his works. Ed. by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1972, Crown pp. 8-246, Price As. 8/-.

*3. **Vikrāntakauravam** or **Sulocanānāṭakam** of Hastimalla (A.D. 13th century) A Sanskrit drama in six acts. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1972, Crown pp. 4-164, Price As. 6/-.

*4. **Pārśvanātha-caritam** of Vādirājasūri · Vādirāja was an eminent poet and logician of the 10th century A. D. This is a biography of the 23rd Tīrthaṅkara in Sanskrit extending over 12 cantos. Edited with an introductory note on Vādirāja and his works by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp. 18-198, Price As 8/-

*5. **Maithilīkalyāṇam** or **Sītānāṭakam** of Hastimalla : A Sk. drama in 5 acts, see No 3 above. Ed. with an introductory note on Hastimalla and his works by PT MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp 4-96, Price As 4/-

6. **Ārādhanāsāra** of Devasena A Prākrit work dealing with religio-didactic topics Prākrit text with the Sk commentary of Ratnakīrtideva, edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1973, Crown pp. 128, Price As. 4/6.

*7 **Jinadattacaritam** of Gunabhadra : A Sk. poem in 9 cantos dealing with the life of Jinadatta, edited by PT. MANOHALAL, Bombay samvat 1973, Crown pp. 96, Price As 5/-.

8. **Pradyumnacarita** of Mahāsenācārya : A Sk. poem in 14 cantos dealing with the life of Pradyumna. It is composed in a dignified style. Edited by

PTS. MANOHARLAL and RAMPRASAD, Bombay Samvat 1973, Crown pp. 230, Price As. 8/-

9. **Cāritrasāra** of Cāmuṇḍarāya : It deals with the rules of conduct for a house-holder and a monk. Edited by PT. INDRALAL and UDAYALAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 103, Price As. 6/-.

*10. **Pramāṇanirṇaya** of Vādirāja : A manual of logic discussing specially the nature of Pramāṇas. Edited by PTS INDRALAL and KHUBCHAND, Bombay Saṁvat 1974, Crown pp. 80, Price As. 5/-.

*11. **Ācārasāra** of Vīranandi . A Sk text dealing with Darśana, Jñāna etc. Edited by PTS. INDRALAL and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1974, Crown pp. 2-98, Price As 6/-.

*12. **Trilokasāra** of Nemichandra : An important Prākrit text on Jaina cosmography published here with the Sk. commentary of Mādhavacandra. Pt. Premi has written a critical note on Nemicandra and Mādhavacandra in the Introduction. Edited with an index of Gāthās by PT. MANOHARLAL, Bombay Saṁvat 1975, Crown pp 10-405-20, Price Rs. 1/12/-.

*13. **Tattvānuśāsana-ādi-saṁgrahaḥ** : This vol. contains the following works. 1) *Tattvānuśāsana* of Nāgasena 2) *Iṣṭopadeśa* of Pūjyapāda with the Sk. commentary of Āśādhara. 3) *Nītisāra* of Indranandi 4) *Mokṣapañcāśikā*. 5) *Śrutāvatāra* of Indranandi. 6) *Adhyātmataranginī* of Somadeva. 7) *Bṛhat-pañca-namaskāra* or *Pātrakesarī-stotra* of Pātrakesarī with a Sk. commentary. 8) *Adhyātmāṣṭaka* of Vādirāja. 9) *Dvā-*

trimśikā of Amitagati 10) *Vairāgyamaṇimālā* of Srīcandra. 11) *Tattvasāra* (in Prākrit) of Devasena 12) *Śrutaskandha* (in Prākrit) of Brahma Hemacandra 13) *Ḍhādasī-gāthā* in Prākrit with Sk. chāyā. 14) *Jñānosāra* of Padmasimha, Prākrit text and Sk. chāyā. PT. PREMI has added short critical notes on these authors and their works Edited by PT. MANOHARLAL, Bombay Samvat 1975, Crown pp 4-176, Price As. 14/-.

*14. **Anagāra-dharmāmṛta** of Āśādhara · Second part of the *Dharmāmrta* dealing with the rules about the life of a monk Text and author's own commentary. Edited with verse and quotation Indices by PTS BANSIDHAR and MANOHARLAL, Bombay Samvat 1976, Crown pp 692-35, Price Rs. 3/8/-.

*15 **Yuktyanuśāsana** of Samantabhadra A logical Stotra which has weilded great influence on later authors like Siddhasena, Hemacandra etc. Text published with an equally important commentary of Vidyānanda. There is an introductory note on Vidyānanda by PT PREMI. Ed by PTS INDRALAL and SHRILAL, Bombay Samvat 1977, Crown pp 6-182, Price As. 13/.

*16. **Nayacakra-ādi-saṁgraha :** This vol. contains the following texts 1) *Laghu-Nayacakra* of Devasena, Prākrit text with Sk chāyā. 2) *Nayacakra* of Devasena, Prākrit text and Sk. chāyā 3) *Ālāpapaddhati* of Devasena. There is an introductory note in Hindī on Devasena and his *Nayacakra* by PT. PREMI. Edited by PT. BANSIDHARA with Indices, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp. 42-148, Price As. 15/-.

*17. **Ṣaṭprābhṛtādi-saṁgraha** : This vol. contains the following Prākrit works of Kundakunda of venerable authority and antiquity. 1) *Darśana-prābhṛta,* 2) *Cāritra-prābhṛta,* 3) *Sūtra-prābhṛta,* 4) *Bodha-prābhṛta,* 5) *Bhāva-prābhṛta,* 6) *Mokṣa-prābhṛta,* 7) *Linga-prābhṛta,* 8) *Śīla-prābhṛta,* 9) *Rayaṇasāra* and 10) *Dvādaśānuprekṣā.* The first six are published with the Sk. commentary of Śrutasāgara and the last four with the Sk. chāyā only. There is an introduction in Hindī by PT. PREMI who adds some critical information about Kundakunda, Śrutasāgara and their works Edited with an Index of verses etc. by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1977, Crown pp 12-442-32, Price Rs. 3/.

*18. **Prāyaścittādi-saṁgraha** : The following texts are included in this volume 1) *Chedapinda* of Indranandi Yogīndra, Prākrit text and Sk. chāyā. 2) *Chedaśāstra* or *Chedanavati,* Prākrit text and Sk chāyā and notes 3) *Prāyaścitta-cūlikā* of Gurudāsa, Sk. text with the commentary of Nandiguru. 4) *Prāyaścittagrantha* in Sk. verses by Bhaṭṭākalaṅka. There is a critical introductory note in Hindī by PT PREMI. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1978, Crown pp 16-172-12, Price Rs. 1/2/-

*19. **Mūlācāra** of Vaṭṭakera, part I : An ancient Prākrit text in Jaina Śaurasenī, Published with Sk. chāyā and Vasunandi's Sk. commentary. A highly valuable text for students of Prākrit and ancient Indian monastic life. Edited by PTS PANNALAL, GAJADHARALAL and SHRILAL, Bombay Saṁvat 1977, Crown pp. 516, Price Rs. 2/4/-.

20 **Bhāvasaṁgraha-ādiḥ :** This vol contains the following works 1) *Bhāvasaṁgraha* of Devasena, Prākrit text and Sk chāyā. 2) *Bhāvasaṁgraha* in Sk. verse of Vāmadeva Paṇḍita 3) *Bhāva-tribhangī* or *Bhāvasaṁgraha* of Śrutamuni, Prākrit text and Sk chāyā. 4) *Āsravatribhngī* of Śrutamuni, Prākrit text and Sk chāyā There is a Hindī Introduction with critical remarks on these texts by PT PREMI Edited with an Index of verses by PT PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1978, Crown pp 8-284-28, Price Rs. 2/4/-

21. **Siddhāntasāra-ādi-Saṁgraha :** This vol contains some twentyfive texts 1) *Siddhāntasāra* of Jinacandra, Prākrit text, Sk chāyā and the commentary of Jñānabhūṣaṇa. 2) *Yogasāra* of Yogicandra, Apabhraṁśa text with Sk. chāyā. 3) *Kallārāloyanā* of Ajitabrahma, Prākrit text with Sk. chāyā. 4) *Amṛtāśīti* of Yogīndradeva, a didactic work in Sanskrit 5) *Ratnamālā* of Sivakoṭi. 6) *Śastrasārasamuccaya* of Māghanandi, a Sūtra work divided in four lessons. *Arhatpravacanam* of Prabhācandra, a Sūtra work in five lessons 8) *Āptasvarūpam*, a discourse on the nature of divinity 9) *Jñānalocanastotra* of Vādirāja (Pomarājasuta). 10) *Samavasaraṇastotra* of Viṣṇusena 11) *Sarvajñastavana* of Jayānandasūri. 12) *Pārśvanātha-samasyā-stotra* 13) *Citrabandhastotra* of Guṇabhadra 14) *Maharṣi*-stotra (of Āśādhara). 15) *Pārśvanātha-stotra* or *Lakṣmīstotra* with Sk. commentary. 16) *Neminātha-stotra* in which are used only two letters viz *n* & *m* 17) *Śaṅkhadevāṣṭaka* of Bhānukīrti. 18) *Nijātmāṣṭaka* of Yogīndradeva in Prākrit. 19) *Tattvabhāvana*

or *Sāmāyika-pāṭha* of Amitagati 20) *Dharmarasāyana* of Padmanandi. Prākrit text and Sk chāyā 21) *Sārasamuccaya* of Kulabhadra. 22) *Amgapaṇṇatti* of Śubhacandra Prākrit text and Sk. chāyā. 23) *Śrutāvatāra* of Vibudha Śrīdhara. 24) *Śalākāniksepana-niṣkāsana-vivaraṇam* 25) *Kalyāṇamālā* of Āśādhara. PT PREMI has added critical notes in the Introduction on some of these authors. Edited by PT. PANNALAL SONI Bombay Samvat 1979 Crown pp. 32-324, Price Rs 1/8/-.

*22 **Nītivākyāmṛtam** of Somadeva : An important text on Indian Polity, next only to *Kauṭilya-Arthaśāstra*. The Sūtras are published here along with a Sanskrit commentary. There is a critical Introduction by PREMI comparing this work with Arthaśāstra. Edited by PT. PANNALAL SONI, Bombay Samvat 1979, Crown pp. 34-426, Price Rs 1/12/-

*23. **Mūlācāra** of Vaṭṭakera, part II : Prākrit text, Sk. chāyā and the commentary of Vasunandi, see No 19 above Bombay Samvat 1980, Crown pp. 332, Price Rs 1/8/-.

24. **Ratnakaraṇḍaka-śrāvakācāra** of Samantabhadra · With the Sanskrit commentary of Prabhācandra. There is an exhaustive Hindī Introduction by PT. JUGAL KISHORE MUKTHAR, extending over more than pp. 300, dealing with the various topics about Samantabhadra and his works. Bombay Saṁvat 1982, Crown pp. 2-84-252-114, Price Rs. 2/-.

25, **Pañcasaṁgrahaḥ** of Amitagati · A good compendium in Sanskrit of the contents of *Gŏmmaṭasāra* Edited with a note on the author and his works by PT. DARBARILAL. Bombay 1927, Crown pp. 8-240, Price As. 13/-.

26. **Lāṭīsaṁhitā** of Rājamalla It deals with the duties of a layman and its author was a contemporary of Akbar to whom references are found in his compositions. There is an exhaustive Introduction in Hindī by PT. JUGALKISHORE. Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Samvat 1948, Crown pp. 24-136, Price As 8/-

27. **Purudevacampū** of Arhaddāsa A Campū work in Sanskrit written in a high-flown style Edited with notes by PT JINADASA, Bombay Samvat 1985, Crown pp. 4-206, Price As 12/-.

28. **Jaina-Śilālekha-saṁgraha :** It is a handy volume living the Devanāgarī version of *Epigraphia Carnatica* II (Revised ed.) with Introduction, Indices etc by PROF. HIRALAL JAIN, Bombay 1928, Crown pp. 16-164-428-40, Price Rs. 2/8-

29-30-31. **Padmacarita** of Raviseṇa This is the Jaina recension of Rāma's story and as such indispensable to the students of Indian epic literature. It was finished in A D. 676, and it has close similarities with *Paümcariu* of Vimala (beginning of the Christian era). Edited by PT. DARBARILAL, Bombay Samvat 1985, vol. i, pp. 8-512 · vol ii, pp. 8-436 ; vol. iii, pp 8-446. Thus pp. about 1400 in all, Price Rs. 4/8/-.

32-33. **Harivaṁśa-purāṇa** of Jinasena I : This is the Jaina recension of the Kṛṣṇa legend. These two volumes are very useful to those interested in Indian epics. It was composed in A. D. 783 by Jinasena of the Punnāṭa-saṁgha. There is a Hindī Introduction by PT. PREMIJI. Edited by PT. DARBARILAL, Bombay 1930, vol. i and ii, pp. 48-12-806, Price Rs. 3/8/-.

34. **Nītivākyāmṛtam,** a supplement to No. 22 above . This gives the missing portion of the Sanskrit commentary, Bombay Samvat 1989, Crown pp. 4-76, Price As. 4/-.

35. **Jambūsvāmi-caritam** and **Adhyātma-kamalamārtaṇḍa** of Rājamalla . See No. 26 above. Edited with an Introduction in Hindī by PT. JAGADISHCHANDRA, M. A., Bombay Samvat 1993, Crown pp. 18-264-4, Price Rs 1/8/.

36 **Triṣaṣṭi-smṛti-śāstra** of Āśādhara : Sanskrit text and Marāthī rendering. Edited by PT. MOTILAL HIRACHANDA, Bombay 1937, Crown pp. 2-8-166, Price As. 8/-.

37. **Mahāpurāṇa** of Puspadanta, Vol. I **Ādipurāṇa** (Samdhis 1-37) : A Jaina Epic in Apabhramśa of the 10th century A. D. Apabhramśa Text, Variants, explanatory Notes of Prabhācandra. A model edition of an Apabhramśa text, Critically edited with an Introduction and Notes in English by DR. P. L. VAIDYA, M. A., D. Litt., Bombay 1937, Royal 8vo pp. 42-672, Price Rs. 10/-.

37 (a). Rāmāyaṇa portion separately issued, Price Rs. 2.50.

38. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra Vol. I This is an important Nyāya work, being an exhaustive commentary on Akalanka's *Laghīyastrayam* with Vivrti (see No 1 above). The text of the commentary is very ably edited with critical and comparative foot-notes by PT. MAHENDRAKUMARA There is a learned Hindī Introduction exhaustively dealing with Akalanka, Prabhācandra, their dates and works etc. written by Pt KAILASCHANDRA A model edition of a Nyāya text. Bombay 1938, Roval 8 vo pp 20-126-38-402-6, Price Rs 8/.

39. **Nyāyakumudacandra** of Prabhācandra, Yol II: See No. 38 above. Edited by PT. MAHENDRAKUMAR SHASTRI who has added an Introduction Hindī dealing with the contents of the work and giving some details about the author. There is a Table of contents and twelve Appendices giving useful Indices Bombay 1941. Royal 8vo pp. 20+94+403-930, Price Rs. 8/8/-

40. **Varāṅgacaritam** of Jaṭā-Simhanandi : A rare Sanskrit Kāvya brought to light and edited with an exhaustive critical Introduction and Notes in English by PROF. A N. UPADHYE, M A., Bombay 1938, Crown pp. 16+56+392, Price Rs. 3/-.

41. **Mahāpurāṇa** of Puspadanta, Vol. II (Samdhis 38-80) : See No. 37 above. The Apabhraṁśa Text critically edited to the variant Readings and Glosses, along with an Introduction and five Appendices by

DR. P.L. VAIDYA, M.A.,D.Litt., Bombay 1940. Royal 8vo. pp. 24+570. Price Rs. 10/-.

42. **Mahāpurāṇa** of Puṣpadanta, Vol. III (Saṁdhis 81-102) · See No 37 and 40 above. The Apabhraṁśas Text critically edited with variant Readings and Glosses by DR. P. L. VAIDYA, M.A., D. Litt. The Introduction covers a biography of Puṣpadanta, discussing all about his date, works, patrons and metropolis (Mānyakheṭa). PT. PREMI'S essay 'Mahākavi Puspadanta' in Hindī is included here. Bombay 1941. Royal 8vo pp 32+28+314. Price Rs. 6/-.

42(a) **Harivaṁśa** portion is separately issued Price Rs 2 50

43. **Ajanāpavanaṁjaya-nāṭakam** and **Subhadrā-nāṭikā** of Hastimalla . Two Sanskrit Dramas of Hastimalla (see also No 3 above). Critically edited by PROF M V PATWARDHAN The Introduction in English is a well documented essay on Hastimalla and his four plays which are fully studied. There is an Index of stanzas from all the four plays. Bombay 1950. Crown pp. 8+68+120+128. Price Rs. 3/-.

44. **Syādvādasiddhi** of Vādībhasimha · Edited by PT. DARBARILAL with Introductions etc. in Hindī shedding good deal of light on the author and contents of the work Bombay 1950 Crown pp. 26+32+34+80. Price Rs 1-50

45. **Jaina Śilālekha-saṁgraha**. Part II (see No. 28 above) : The texts of 302 Inscriptions (following A. Guérinot's order) are given in Devanāgarī with summary

in Hindī. There is an Index of Proper Names at the end. Compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A. Bombay 1952. Crown pp. 4+520 Price Rs. 8/-.

46 **Jaina Śilālekha-saṁgraha,** Part III (see Nos 28 & 45 above) · The texts of 303-846 inscriptions (following Guerinot's list) is given in Devanāgarī with summary in Hindī compiled by PT. VIJAYAMURTI, M.A There is an Index of Proper Names at the end. The Introduction by SHRI G. C. CHAUDHARI is an exhaustive study of inscriptions. Bombay 1957. Crown pp. 8+178+592+42 Price Rs 10/-

47. **Pramāṇaprameyakalikā** of Narendrasena (A.D 18th century) A Nyāya text dealing with Pramāṇa and Prameya The Sanskrit text critically edited by Pt DARBARILAL. The Hindī Introduction deals with the author and a number of topics connected with the contents of this work Bhāratiya Jñānapīṭha Kashi, Varanasi 1961. Price Rs. 1 50.

48 **Jaina Śilālekha-saṁgraha,** Part IV (see Nos. 28, 45 & 46 above) : This vol contains some 654 inscriptions along with 324 Pratimā-lekhas of Nagpur in Appendix. Compiled by DR. VIDYADHAR JOHARAPURKAR with an exhaustive study of the inscriptions in the Introduction and Indexes in the end Varanasi Vīra Nirvāṇa Samvat-2491, Crown pp. 10+34+506. Price Rs. 7/-.

49. **Ārādhanāsamuccayo-Yogasāra Saṁgrahaśca** : This vol. contains two small sanskrit texts— 1) Ārādhana samuccaya of Sri Ravicandra Munīndra

and 2) Yogasārasamuccaya of Sri Gurudas. Edited with indexes of verses and introductions by Dr. A. N. UPADHYE, Varanasi 1967, crown pp. 8+58. Price Re. 1/.

50. **Śṛgārārṇavacandrikā** of Vijayavarṇī. A hitherto unpublished work on Sanskrit poetics. Critically edited by Dr. V M. Kulkarni with Introduction, detailed table of contents and six valuable Appendexes. Varanasi 1969, crown pp. 12+66+176. Price Rs. 3/-.

For copies please write to—

BHĀRATĪYA JÑĀNAPĪTHA

3620/21 Netaji Subhash Marg,

Delhi—6 (India)